अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

❑ मूल्य : 5.00
❑ अंक : 03
❑ 16-30 सितंबर, 2013
❑ वर्ष : 37

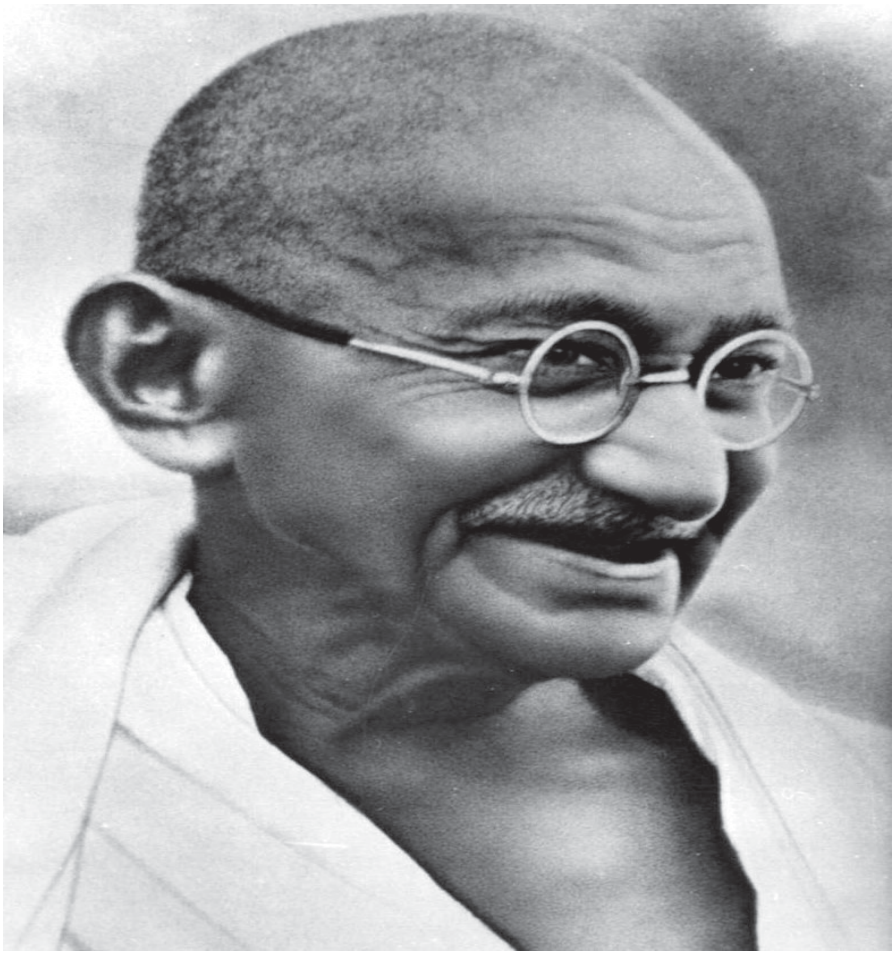

धर्म और राजनीति

आज तक के अपने प्रयोगों के अंत में मैं इतना अवश्य कह सकता हूं कि सत्य का सम्पूर्ण दर्शन सम्पूर्ण अहिंसा के बिना असम्भव है।

ऐसे व्यापक सत्य-नारायण के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए जीव मात्र के प्रति आत्मवत प्रेम की परम आवश्यकता है। और, जो मनुष्य ऐसा करना चाहता है, वह जीवन के किसी भी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि सत्य की मेरी पूजा मुझे राजनीति में खींच लायी है। जो मनुष्य यह कहता है कि धर्म का राजनीति के साथ कोई संबंध नहीं है, वह धर्म को नहीं जानता, ऐसा कहने में मुझे संकोच नहीं होता, और ऐसा कहने में मैं अविनय करता हूं।

('सत्य के प्रयोग' से)

–महात्मा गांधी

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत

वर्ष : 37, अंक : 03
16-30 सितंबर, 2013

सर्व सेवा संघ
द्वारा प्रकाशित
अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

संपादक
बिमल कुमार
मो. 9235772595
प्रसार व्यवस्थापक
उमेश कुमार

मूल्य : पांच रुपये
शुल्क
वार्षिक : 100 रुपये
आजीवन : 1,000 रुपये

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-221 001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
sarvodayavns@yahoo.co.in
Website : sssprakashan.com

विज्ञापन दर
पूरा पृष्ठ : 2000 रुपये
आधा पृष्ठ : 1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ : 500 रुपये

अंदर के पृष्ठों पर...

1. तीन कविताएं... 2
2. रुपये में गिरावट एवं... 3
3. क्या भारत की स्वाधीनता... 4
4. आपदा के बाद पुनःनिर्माण... 6
5. चाल से खुशहाल... 9
6. झारखण्ड में कम्पनियों... 11
7. सोने की भूख को नियंत्रित... 12
8. कन्याभ्रूण हत्या : एक... 15
9. सूचना के अधिकार के... 16
10. ग्रामशक्ति की एक और... 17
11. नरों में इंद्र नरेंद्र.... 18
12. मंत्री का स्पष्टीकरण/अन्य... 19
13. असम शांति यात्रा... 20

केशव शरण की तीन कविताएं

यह धरती

हल-बैल चाहती थी
धरती यह
गंवाकर अपने जंगल और जीवों को
रातो-रात
लेकिन इसकी उपजाऊ मिट्टी
निकाल ले गयीं मशीनें
फिर दुनिया-भर के कूड़ों ने
इसमें आश्रय पाया
और जब यह पट गयी पूरी तरह से
तब कंक्रीट आया
और छा गया इस पर
आसमान तक
जहां से इसे कभी बादल निहारते थे
और अपना प्यार बरसाते थे
आते-जाते

आज यह धरती
बाहर से जगमगा रही है
लेकिन अंदर से
कसमसा रही है
जहां एक ठोस अंधेरे के सिवा कुछ नहीं है

× × ×

कविवर क्या कर सकते थे

सिर्फ़ उसके पत्ते झर रहे थे
और वहां यह हो रहा था कि
वह सूख रहा है

जबकि उसके पत्ते झर रहे थे
उसे फिर से भरने के लिए
लेकिन वहां प्रमाणपत्र प्रस्तुत हो रहा था
उसकी कटाई का आदेश प्राप्त करने के लिए
अलबत्ता, आदेश प्राप्त होते-होते
वह फिर से भर गया था अंग-प्रत्यंग
मगर अब उसे कटने से
कौन बचा सकता था

एक तो शासनादेश
दूसरे दबंग
लिहाज़ा, अकेले कविवर
क्या कर सकते थे

× × ×

काले जल का कंठहार

दूर से बहती आती
यहां राजघाट के पास
सर्व सेवा संघ के पीछे
अपने घुमाव में
भूमि का
कंठहार बन जाती
यह नदी
वरुणा है
जो ढंकती जा रही है
कालिख की परतों से
लेकिन, इससे उनको क्या मतलब
जिनको सोना कमाना है
उद्योग-धंधों से
बहाकर सारा कचरा
इसी में

एक कौआ भी
इसमें चोंच नहीं डुबाता
एक मछली भी
उछलती दिखायी नहीं देती हवा में
सांस लेने के लिए एक बार
जाने कैसा महसूस करती होगी भूमि
पहने हुए स्थिर काले जल का कंठहार

❑ एस 2/564, सिकरौल, वाराणसी-221002 (उ.प्र.), मो. 09415295137

संपादकीय

रुपये में गिरावट एवं सम्प्रभुता

डालर के मुकाबले रुपये के मूल्य में निरंतर गिरावट ने भारत के पूंजीवादी बाजार में हलचल मचा दी। नियंत्रण मुक्त बाजार एवं नियंत्रण मुक्त व्यापार के बड़े-बड़े पैरोकार भी बदहवासी में यह कहते नजर आये कि सरकार को कुछ करना चाहिए। जो यह कहते थे कि बाजार स्व-नियामक (self-regulating) होता है, वे यह कहने को मजबूर हो गये कि बाजार एवं व्यापार को नियंत्रण मुक्त रखना है, लेकिन अगर पूंजीवादी हितों को चोट पहुंच रही हो तो राज्य को दखल देना होगा। सन् 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान भी यही मानसिकता देखने को मिली थी। अमेरिका और यूरोप के बड़े बैंक जब दिवालिया होने के कगार पर पहुंचने लगे, तो राज्य को बहुत बड़ी धनराशि उन्हें बचाने के लिए लगाना पड़ा था।

इसका अर्थ साफ है, बाजार एवं व्यापार को नियंत्रण-मुक्त तब तक रहना चाहिए, जब तक कि वे पूंजीवादी-लूट (उनके शब्दों में लाभ) के माध्यम हैं। लेकिन ज्यों ही पूंजीवाद पर स्वयं संकट आये, राज सत्ता को आगे बढ़ कर उसे बचाना तथा उसका हित रक्षण करना चाहिये।

वर्तमान संकट थोड़ा भिन्न है। यह वैश्विक पूंजीवाद का संकट नहीं है। बल्कि पूंजीवाद के सहारे उभरती अर्थ-व्यवस्थाओं का संकट है। अमेरिका और यूरोप के मुख्य देशों में जब मंदी का दौर आया, तो पूंजी का प्रवाह इन उभरती अर्थ-व्यवस्थाओं की ओर मुड़ गया। क्योंकि इन अर्थ-व्यवस्थाओं में अधिक लाभ दिख रहा था। लेकिन, इधर ज्योंही अमेरिका की अर्थव्यवस्था में सुधार के लक्षण दिखाई दिये, पूंजी का प्रवाह पुनः अमेरिका की ओर होने लगा। भारत, चीन, ब्राजील, मेक्सिको आदि सभी देशों पर इसका प्रभाव दिखने लगा। इन सभी देशों की मुद्राएं डालर के मुकाबले कमजोर होने लगीं। और इन मुद्राओं का मूल्य, डालर के मुकाबले गिरने लगा।

इस घटना क्रम से हमें यह सीख लेनी होगी कि वैश्विक पूंजी, अत्याधिक चलायमान है। जिधर अधिक लाभ की सम्भावना होगी, उसका प्रवाह उधर ही होने लगेगा। इस कारण एक अस्थिरता की सम्भावना हर उस अर्थ-व्यवस्था में बनी रहती है जो अपने विकास (?) के लिए वैश्विक पूंजी पर निर्भर करती है। भारत की सरकार के ऊपर यह दबाव लगातार बना रहता है कि वह वैश्विक पूंजी के लिए अपनी अर्थ-व्यवस्था में अधिक-से-अधिक क्षेत्रों का द्वार खोल दे। चाहे वह खुदरा व्यापार हो, बैंकिंग हो, इन्श्योरेंस हो या अन्य क्षेत्र हों। लेकिन जब वैश्विक पूंजी का प्रवाह पलट जाता है, तब अर्थव्यवस्था की स्थिरता स्वदेशी क्षेत्र पर ही टिकी रहती है।

स्वदेशी केवल स्वावलम्बन का मंत्र नहीं है। यह सम्प्रभुता का भी मंत्र है। गांधी-विचार एवं सर्वोदय-विचार ने अधिक-से- अधिक क्षेत्रों में स्वदेशी व सम्प्रभुता को बढ़ाने का विचार रखा है। अन्न सम्प्रभुता, वस्त्र सम्प्रभुता, ऊर्जा सम्प्रभुता, शिक्षा व स्वास्थ्य सम्प्रभुता आदि इसके कुछ उदाहरण हैं। यह बात इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि सम्प्रभुता का प्रकटीकरण केवल संसद के निर्णय लेने की क्षमता से नहीं होता। बल्कि जब अधिकाधिक क्षेत्रों में सम्प्रभुता होगी, तो वैश्विक पूंजी या वैश्विक बाजार हमारी सम्प्रभुता का क्षरण नहीं कर पायेगी। अन्यथा हम संसद की सम्प्रभुता का नारा रटते रहेंगे तथा देश की सम्प्रभुता एक-एक कर सभी क्षेत्रों से लुप्त होती चली जायेगी।

रुपये का अधिक कमजोर होते जाने का एक और कारण है। भारत में काले धन का एक विशाल तंत्र है। जब रुपये की कीमत गिरने लगी तो काले धन का एक बड़ा हिस्सा सोना खरीदने में लगने लगा। इससे सोने की कीमत और तेजी से बढ़ने लगी। सोने की कीमत बढ़ने से भी रुपये की कीमत गिरने लगी। आज विश्व की जो वित्तीय व्यवस्था है, उसमें किसी भी मुद्रा का मूल्य या तो डालर की तुलना में देखा जाता है या सोने के मूल्य की तुलना में देखा जाता है। इस प्रकार जब अमेरिका की अर्थव्यवस्था में सुधार के लक्षण से भारत के रुपये में गिरावट आयी तो काला धन भी कमजोर होते रुपये पर चोट करता चला गया।

अतः भारत की अर्थव्यवस्था को न केवल चलायमान वैश्विक पूंजी के दबाव से बचाये रखने की रणनीति अपनानी होगी, बल्कि काले धन के प्रभाव को खतम करने के भी मजबूत इंतजाम करने होंगे।

भारत में अहिंसक आंदोलनकारी शक्तियों को अपने संघर्षों को दो स्तरों पर बढ़ाना होगा। जल-जंगल-जमीन-खनिज आदि प्राकृतिक स्रोतों की लूट का जो सिलसिला है तथा उन पर निर्भर करने वाले समुदायों के शोषण की जो व्यवस्था है, उसके खिलाफ तो संघर्ष चलाने ही होंगे। लेकिन साथ ही नियंत्रण मुक्त बाजार एवं नियंत्रण मुक्त व्यापार के खिलाफ, वैश्विक पूंजी के निर्बाध आवाजाही के खिलाफ तथा काले धन के खिलाफ भी एक व्यापक मोर्चा बनाना होगा। सर्व सेवा संघ को इन दोनों स्तरों पर पहल करना होगा, क्योंकि एक लंबे अर्से से सर्व सेवा संघ इन आंदोलनों को चला रहा है। यह केवल रुपये को बचाने की लड़ाई नहीं है। अपनी सम्प्रभुता को और अधिक सम्पुष्ट करने तथा अक्षुण्ण रखने की लड़ाई है।

बिमल कुमार

क्या भारत की स्वाधीनता पर आँच आने लगी है?

❑ बाबूराव चन्दावार

प्रस्तावना : राष्ट्रीय लोकजीवन जिन समस्याओं से ग्रसित रहा है उसका स्वरूप भयावह और स्वाभाविक है। समस्याएं जब विस्फोटक बनती जाती हैं तब उनमें भयावह लपटें निकलती ही हैं, जिनकी दाहकता सहपाना संभव नहीं हो पाता है। पंजाब के अमृतसर से वृत्तवाहिनी न्यूज चैनल द्वारा जिन चलचित्रों का प्रसारण किया गया उन्हें देखकर लोकजीवन को उद्वेलित करनेवाली दाहकता आंखों में चुभने लगी थी। उसमें से संभावित विनाश लीला झलक रही थी।

पंजाब के कुछ गांवों को इसमें चित्रित किया गया था, जिसमें दिख रहा था कि पुलिस जवानों एवं गांवों के लोगों के बीच प्रत्यक्ष में संघर्ष छिड़ गया है। गांव के लोगों को पुलिस जवानों द्वारा डंडों से पीटकर भगाते हुए दिखाया जा रहा था। गांव के लोग पुलिस जवानों पर पत्थर फेंककर उन्हें घायल किए जा रहे थे। देश में इस तरह की घटनाएं सर्वत्र घट रही हैं। गांव के लोग तथा पुलिस प्रशासन के बीच संघर्ष की प्रत्यक्ष स्थिति बनती जा रही है। उत्तर प्रदेश के नोएडा के पास वाले गांवों के विषय में वह इसके पूर्व देखा ही गया था। राष्ट्रीय लोकजीवन में गांवों के लोगों का आक्रामक रूख देखा जा रहा है। वह किस दिशा को दर्शानेवाला है, इसकी पहचान करना आवश्यक है।

एक : बिहार में रोहतास जिला के एक बड्डी गांव है, जहां पर इस स्वाधीनता दिवस पर दलितों द्वारा तिरंगा झंडा लहराने के लिए प्रयास किया गया। यहां जातीय संघर्ष छिड़ गया, एक दलित की मौत हो गई। चालीस से अधिक दलित घायल हुए। उनमें से कुछ को गंभीर चोटें आयीं। स्कूली बच्चों को भी नहीं छोड़ा गया। उन्हें मारा-पीटा गया तथा घर में छिपे बच्चों को बाहर निकालकर छत से नीचे जमीन पर फेंक दिया गया। दलितों के घर जलाए गए और संत रविदास के मंदिर पर भी सवर्णों द्वारा हमला किया गया। यह सब स्वाधीनता दिवस पंद्रह अगस्त हो हुआ जिसे दलितों की स्वाधीनता को नकारनेवाली घटना माना जा सकता है।

महाराष्ट्र प्रदेश का पुणे महानगर महाराष्ट्र की सांस्कृतिक राजधानी माना जाता है। महाराष्ट्र राज्य को प्रगतिशील राज्य कहा जाता है। महाराष्ट्र के बुद्धिजीवी अभिमान करते ही हैं। इसी राज्य में अंधश्रद्धा निर्मूलन का कार्य करनेवाले प्रमुख समाज सेवी डॉ. नरेंद्र दाभोलकरजी की 21 अगस्त, 2013 की सुबह पुणे में ही दो युवकों ने पीछे से उनपर पिस्तौल की गोलियां दागकर हत्या कर दी। पुणे के ही हिंदू सनातनी नाथुराम गोडसे द्वारा महात्मा गांधी की दिल्ली में 30 जनवरी, 1948 को हत्या कर दी गई थी। इस तरह की कई घटनाएं देश में हो रही हैं जिनका लेखा-जोखा समय-समय पर लिया जाता है। इस प्रकार की हत्याएं एवं हिंसा की घटनाओं को जिस रूप में देखा जा रहा है उसमें सत्यनिष्ठ रहने की जरूरत होती है जिसका कई कारणों से अभाव दीखता है। नित्य होने वाली हिंसक घटनाओं तथा हत्याओं को तात्कालिक मानकर ही उन पर प्रतिक्रियाएं दी जाती हैं। हत्याओं तथा हिंसक घटनाओं की बुनियाद में मात्र तात्कालिकता ही नहीं होती है वैचारिक तथा सैद्धांतिक मान्यताओं के प्रति अपनी प्रतिबद्धता तथा हठधर्मिता, की मानसिकता भी होती है। इसी में से अराजकता तथा फासीवादी तत्त्वों को बल मिलता रहा है जिससे लोकजीवन में एक-दूसरे के प्रति घृणा फैलाने में सफलता प्राप्त करके स्वयं को धन्य मानने की भूलें इन तत्त्वों द्वारा की जाती रही हैं।

दो : इस समय देश में अराजकता तथा एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु नहीं रह पाने का दौर चल रहा है जिसकी बुनियाद राजनैतिक सत्ताकांक्षा द्वारा डाली जाती है। क्योंकि एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु नहीं रह पाने की वजह से ही राजनीति की बुनियाद बनाई गई है जिस कारण राष्ट्रीय जीवन अराजकता की ओर बढ़ते जा रहा है। स्वामित्व का जब अवसर बनता है तब उसी में से एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु नहीं रह पाने के कारणों का निर्माण हुआ करता है। माना गया है कि सत्ताकांक्षा के बिना राजनीति नहीं की जा सकती है। राजनैतिक सत्ता पाने के लिए सत्ताकांक्षी होना अनिवार्य माना गया है। इसलिए स्वामित्व प्रस्थापित करने के लिए राजनीति करते रहने के उपक्रमों से एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु नहीं होने की स्थिति बनती है, जो अराजकता की शकल में हो रही है। इसलिए अराजकता राजनीति का ऐसा अनिवार्य परिणाम माना जा सकता है जिसे टाला नहीं जा सकता है। चुनावों के लिए जो वातावरण बनाया जाता है, उसमें वह स्पष्ट रूप से दिखते आया है।संसदीय लोकतंत्र में चुनाव अनिवार्य है इसीलिए उसे स्वागत योग्य मानकर स्वीकृत कर लिया गया है।

संसदीय लोकतंत्र की उपलब्धियों में यदि चुनाव प्रक्रिया द्वारा अराजकता को भी गिनाया गया तो उसे अनुचित नहीं माना जा सकता। संसदीय लोकतंत्र के प्रति आस्था व्यक्त करते हुए लोकतंत्रवादियों द्वारा उसे अनुचित माना ही जाता है। इसलिए संसदीय लोकतंत्र में चुनाव तथा चुनाव पद्धति को अनिवार्य मानने से ही अराजकता के लिए अवसर बनते हों

तो संसदीय लोकतंत्र द्वारा ही अराजकता को प्रस्तुत करते रहने का दोषारोपण किया ही जा सकता है जिस पर गंभीरतापूर्वक सोचने का उपयुक्त समय आ गया है।

तीन : सत्ताकांक्षा के चलते ही राजनीति में फासीवादी तत्त्वों के लिए अवसर बनते हैं। क्योंकि सत्ताकांक्षा की पूर्ति तब होती है जब सत्ता पा लेने की प्रतिस्पर्द्धा या प्रतियोगिता में शामिल होना अनिवार्य माना जाता है। सत्ता पा लेने की अभिलाषा से ही आक्रामक राजनीति की जाती है और आक्रामकता को फासीवाद द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता है। इसकी मान्यता राजनीति में बन गई है जिसके चलते फासीवादी मानसिकता को राजनीति में स्थान तथा प्रतिष्ठा दिलाई गई है। बिना समझे संसदीय लोकतंत्र के लिए राजनीति किया जाना जिन्होंने अनिवार्य मान लिया है वे मानवीयता से पूरी तरह हट गए होंगे, वह फासीवादी मानसिकता का ही अनिवार्य परिणाम माना जाना चाहिए।

राजनीति में फासीवादी आक्रामकता प्रतिष्ठित होने से अराजकता फैलते रहना ही स्वाभाविक हो जाता है। इस समय भारत की राजनीति में सभी राजनैतिक दल एवं उनके संगठन फासीवादी गतिविधियों को चलाकर अपना अस्तित्व असरकारी बनाने के लिए प्रतिबद्ध हो गए हैं। इसलिए संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए राजनैतिक दलों का प्रयोजन एवं उनकी उपयोगिता दोनों समाप्त हो गई है। भारतीय स्वाधीनता के मूलतत्त्वों को जो मानते हैं वे यदि इससे चिंतित हो गए हों तो स्वाभाविक ही माना जायेगा। ऐसी स्थिति में संसदीय लोकतंत्र का विकल्प उपस्थित करना ही जरूरी है। क्योंकि उज्ज्वल भविष्य का चिंतन इसकी बुयिाद पर ही संभव हो सकता है। स्वाधीनता के अनुरूप विकल्प की खोज कर लेने की प्रेरणा प्राप्त कर लेना इस परिस्थिति से संभव हो ही सकता है। इसके कुछ आधारभूत तत्त्व वैचारिक स्तर पर किए गए हैं। उन्हें समझना-जानना निहायत जरूरी हो गया है।

चार : राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्ति के उपरान्त भारत का संविधान बनाया गया। पर उसमें स्वाधीनता आंदोलन का संकल्प जिस तरह से जुड़ना चाहिए था उस तरह जुड़ नहीं पाया है। शायद वह संकल्प संविधान रचनेवालों को आकर्षित नहीं कर पाया होगा। राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त कर लेने का जो मतलब संविधान सभा में लगाया गया उसमें लोगों की विशेषकर ग्रामीण भारत के लोगों की स्वाधीनता अपेक्षित नहीं रह पायी है। यदि वह होती तो महात्मा गांधी द्वारा घोषित 'ग्रामस्वराज्य' के संकल्प को संविधान द्वारा अवश्य स्वीकृत किया गया होता, उसे मान्यता प्रदान की गई होती। वह नहीं हो पाया। मात्र अंग्रेजी राज को हटा देना ही स्वाधीनता का मतलब लगाया गया जो स्वाधीनता आंदोलन के संकल्प को पूरी तरह से स्वीकृत नहीं कर पाया है। स्वाधीनता आंदोलन का संकल्प भारत के संविधान में लाया जाना संभव नहीं हो पाया है। उस संकल्प के प्रति सजग रह पाने की आवश्यक थी वह सध नहीं पाया। संविधान द्वारा जिस लोकतांत्रिक व्यवस्था का निर्माण करने का सोचा गया वह स्वाधीनता आंदोलन के संकल्प से हटकर ही रह गया। परिणाम स्वरूप अराजकता के लिए अवसर बनना स्वाभाविक हो गया। संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था द्वारा लोगों की व्यवस्था में प्रत्यक्ष साझेदारी नहीं बन पायी जिसको लेकर जेपी (जयप्रकाश नारायण) ने स्पष्ट किया था कि इस भारत राष्ट्र को लोगों की प्रत्यक्ष साझेदारीवाली राष्ट्रीय स्तर पर राजनैतिक व्यवस्था का (पार्टिसिपेटरी डेमॉक्रेसी) निर्माण किया जाना ही जरूरी हो गया है। महात्मा गांधी ने स्वाधीनता आंदोलन का संकल्प जिस 'ग्रामस्वराज्य' द्वारा प्रस्तुत किया था उसे जेपी ने लोगों की प्रत्यक्ष साझेदारी में देखा था। महात्मा गांधी ने लोगों की प्रत्यक्ष साझेदारीवाली राजनैतिक व्यवस्था का 'पंचायत राज' नामकरण किया था। इसका जेपी द्वारा अनुमोदन किया गया था। पर संसदीय लोकतंत्र में माननेवालों ने इसपर ध्यान नहीं दिया। क्योंकि चुनाव द्वारा जिस बहुमतवाली व्यवस्था को बनाया गया उसे ही लोगों की साझेदारीवाली व्यवस्था मान लेने की भूल इनके द्वारा ही की गई है जिसके चलते संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में लोगों की प्रत्यक्ष साझेदारी बन नहीं पायी है। परिणाम स्वरूप राजनैतिक दलों की सत्ताकांक्षा विकृत दिशा में जाने के लिए अवसर बना गए तथा सत्ताकांक्षा से ही राजनैतिक दल लोगों को उनकी स्वाधीनता प्रदान करने में सफल नहीं हो पाए हैं। क्योंकि वह संभव नहीं था। लोगों को स्वाधीनता नहीं मिले इसकी साजिश राजनैतिक दलों ने कर ली और फासीवाद के संस्कारों से सराबोर हो गए और लोगों की स्वाधीनता पर आक्रामकता द्वारा अपना प्रभुत्व जमाते रहे हैं। इसलिए इस समय जो भी अराजकता की स्थिति बनी हुई दिखाई दे रही है वह राजनैतिक दलों द्वारा आक्रामक रवैया अपनाकर लोगों की स्वाधीनता को कुचल देने की साजिश के तहत बढ़ायी जा रही है।

पाँच : फासीवाद अपना लेने से अराजकता निर्माण होती है। भारत की राजनीति में फासीवाद को स्वीकृत किया गया है, जिसके चलते अराजकता को उत्तेजना मिली है। संसदीय लोकतंत्र में आस्था जतानेवालों में से किसी ने भी इसे स्वीकार नहीं किया है। क्योंकि राजनैतिक दलों ने अराजकता फैलाने के कारणों को गिनाते हुए कहते आए हैं कि मात्र कानून एवं व्यवस्था की समस्या है। कानून एवं व्यवस्था (लॉ एण्ड ऑर्डर) लोगों द्वारा नहीं स्थापित की जाती है। संसदीय लोकतंत्र में→

आपदा के बाद पुनःनिर्माण से पहाड़ बचाये जायं

❑ सुरेश भाई

जहां उत्तराखण्ड की सरकार आपदा के बाद पुनःनिर्माण की योजना बना रही है वहीं आपदाग्रस्त क्षेत्रों में इन दिनों पलायन की भी चर्चा जोरों पर है।

गंगा, यमुना, भागीरथी, अलकनंदा जैसी पवित्र नदियों के संगम व इनके तटों पर निवास करने वाले लोग कभी बड़े भाग्यशाली माने जाते थे। ऐसी भी कहावत है कि इन नदियों के तटों पर जो एक रात्रि भी विश्राम करे, वह पुण्य का भागीदार माना जाता है। लेकिन अब स्थिति भिन्न होती नजर आ रही है। नदियों के पास रहने वाले समाज को अनुभव हो रहा है कि उनके आने वाले दिन संकट में गुजरेंगे। हर बरसात में औसत दो गांव और दो ऐसी आबादी वाले क्षेत्र तबाह होते नजर आ रहे हैं जहां पर लोग तीर्थ स्थलों तक पहुंचने से पहले चाय, पानी पीकर विश्राम लेते थे। बरसात में पहाड़ी राज्यों में खासकर उत्तराखण्ड, हिमाचल, जम्मू-कश्मीर और उत्तर पूर्व के राज्यों में भी लोगों को अपने पांव के नीचे की जमीन असुरक्षित नजर आ रही है। आखिर ऐसा पिछले वर्षों में क्या हो गया कि लोग अकस्मात पहाड़ी क्षेत्रों में अब अपने को सुरक्षित महसूस नहीं कर पा रहे हैं। ध्यान देना है कि इस साल 16-17 जून को उत्तराखण्ड में आयी आपदा की प्रभावित क्षेत्रों में चर्चा है कि "अब आगे तो यहां से बाहर ही निकलना पडेगा।" कहां निकलना है? किधर जाना है? किसके पास जाना है?, वहां रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य की जिम्मेदारी कौन उठायेगा? इसकी गंभीरता को उतना नहीं समझा जा रहा है। इससे सवाल पैदा होता है कि क्या पहाड़ के लोग मैदानों की तरफ भागेंगे? क्या पहाड़ खाली हो जायेंगे? इसके बाद पहाड़ों में कौन रहने आयेगा? ये ज्वलंत सवाल केतली में चाय की तरह उबलते दिखाई दे रहे हैं। केवल इतना ही नहीं देश-विदेश से आने वाले पर्यटक बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री धाम की यात्रा करने पर पुनर्विचार करने लग गये हैं। ऐसी स्थिति में यह विचार जरूरी है कि इन क्षेत्रों में करना क्या चाहिये? यदि सरकार सोचती है कि यहां सड़क चौड़ी बनें, नदियों के उद्‌गम से एक के बाद एक सुरंग बांधों का निर्माण हो, नदियों के किनारों पर व्यावसायिक खनन हो, भूस्खलन प्रभावित क्षेत्रों में बहुमंजिली इमारत बने, बाहर से पर्यटन के नाम पर आयातित संस्कृति का निर्माण हो, तो इन सब को पहाड़ की भौगोलिक संरचना अब एक साथ नहीं ढ़ो पायेगी। ध्यान देकर सोचना भी पड़ेगा कि पहाड़ों में रहने वाली आबादी की सुरक्षा को जितना नजरअंदाज करेंगे और पहाड़ों की रीढ़ तोड़ने वाले विकास को जितना बढ़ावा मिलेगा, उसका उत्तर ही आपदा, जलप्रलय जैसे विनाश के रूप में ही दिखाई देगा।

उत्तराखण्ड में गढ़वाल और कुमांऊ के खूबसूरत क्षेत्र पर्यटकों को लम्बे समय से आकर्षित करते आये हैं। वर्ष 2010 की भारी वर्षा से आयी आपदा ने लगभग 196 लोगों को मारा था। तब भी अधिकांश मृत्यु उन स्थानों पर हुई है जहां पर सड़क के किनारे लोग बसे हुए थे या नदियों के किनारे

→चुने गए जनप्रतिनिधियों द्वारा बहुतम से पारित प्रस्तावों को स्थापित किया जाता है। इन्हीं पारित प्रस्तावों के कानून भी बने हैं। यदि लोगों के हित में कानून बने ही नहीं हैं या जनप्रतिनिधियों का जो प्रावधान संविधान ने बनाया उसे लागू किया गया वह जनविरोधी बनकर ही रह गया हो, इसमें से ही राजनैतिक व्यवस्था जनविरोधी या जनद्रोही बन सकती है। लेकिन इसे नहीं समझा जा रहा है। संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में जो जनप्रतिनिधि बहुमत द्वारा चुने जाते हैं उनके वर्गों के हित लोगों के हित में बाधक बनते आए हैं। कानून तथा व्यवस्था यदि जनविरोधी बन गई हो तो लोग उसका प्रतिवाद तथा विरोध अवश्य करेंगे और इसके लिए अवसर बनते रहेंगे। इन अवसरों के चलते ही निःशंक अराजकता का निर्माण हुआ करता है, इसे समझना होगा। अराजकता का निर्माण लोगों की स्वाधीनता प्राप्त कर लेने की अच्छा - आकांक्षा से भी होती है जिसकी उपेक्षा हर समय संसदीय लोकतंत्र में की गई है। इसके चलते ही भारत की स्वाधीनता पर आंच भी आने लगी है। क्या इसे स्वाधीनता में आस्था रखनेवालों को सह लेना उचित माना जाएगा? यदि इसे उचित नहीं माना जाता है तो स्वाधीनता के अनुरूप उसे बल देनेवाली राजनैतिक व्यवस्था का निर्माण किया जाना ही अनिवार्य हो जाता है।

अर्थात् फासीवाद एवं अराजकता दोनों एक सिक्के के दो बाजू बने हुए हैं। इसे स्वाधीनता में माननेवालों को गंभीरता से लेना जरूरी हो गया है। मात्र बिना वजह संसदीय लोकतंत्र की आस्था में आकंठ डूबकर लोगों की स्वाधीनता की उपेक्षा करते रहना उचित नहीं है। क्योंकि संसदीय लोकतंत्र से भी श्रेष्ठतम स्थिति या अवस्था भारत के लोगों को स्वाधीनता में जीने की है। ❑

* डी-1, 13-सईनगर, सिंहगढ़ रोड, पुणे-411030 (महाराष्ट्र), फोन : 020-24250693

का समाज या संवेदनशील पहाड़ियों के नीचे बसे हुए गांव के निवासियों को ही सबसे अधिक जान माल का नुकसान हुआ है। उत्तराखण्ड का कुमांऊ क्षेत्र बहुत खूबसूरत है। यहां गढ़वाल क्षेत्र के जैसे ऊंचे-ऊंचे पर्वत और निचली घाटियां नहीं हैं, फिर भी यहां पर 2010 की भारी वर्षा ने सबसे अधिक तबाही मचाई थी। इसके पीछे सबसे बड़ा कारण सड़कों का घटिया निर्माण व अनियंत्रित जाल और इनके निर्माण से निकले मलबा के ढेरों का टूटकर बहना व सूखे गाड-गदेरों में अकस्मात पानी बढ़ जाने से प्रकृति और मनुष्य दोनों की तबाही देखने को मिली है।

गत् वर्ष सन् 2012 में भी उत्तराखण्ड में बाढ़ आयी, इसके कारण उत्तरकाशी में भागीरथी की सहायक नदी अस्सी गंगा ने विकराल स्थिति पैदा की है। अस्सी गंगा में अथाह जलप्रलय के कारण इसके आसपास रहने वाले दर्जनों गांव का भूगोल बदल गया है, यहां के गांव उत्तरा, ददालका, चींवा, रवाड़ा, अगोड़ा, भंकोली, गजोली, नौगांव, गंगोरी की सैकड़ों हेक्टेयर कृषि-भूमि मलबे में बदल गयी हैं। यहां पर संगमचट्टी व डोडीताल तक पहुंचने हेतु पर्यटकों का तांता लगा रहता था, अब उस पर रोक लग गयी है। केवल यहां के बारे में इतना ही नहीं है, बल्कि यह भी जानने का प्रयास हो कि सन् 2012 में अस्सी गंगा में उतना जलप्रलय कैसे हुआ था? आलम यह है कि तीन वर्षों से अस्सी गंगा के केवल 15 किमी क्षेत्र में तीन जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण से निकलकर आये मलबे के ढेर कई स्थानों पर नदी के तटों पर जमा थे, यहां की वनस्पतियों की खूबसूरती पर आरियां चलाई गई थीं, बांध की सुरंग बनाने के लिए पहाड़ों में भारी कंपन पैदा करने वाले विस्फोटों का प्रयोग किया गया था। इसी बीच अगस्त, 2012 को इस नदी के सिरहाने पर बकरिया टॉप नामक स्थान में बादल फटने से हुए जलप्रलय ने मलबे के ढेरों को साथ लेकर इसके आगे स्थित मनेरी भाली द्वितीय जल विद्युत परियोजना के बैराज तक अरबों रुपयों की संपत्ति को बर्बाद किया है। यहां पर नदी के आरपार आबादी क्षेत्र के अंतर्गत कई होटलों, भवनों, कृषि योग्य भूमि को मलबे के ढेरों में देखा जा सकता है। यह घटना 3 अगस्त की रात 12 बजे की थी, जबकि अगस्त का महीना बाढ़ के लिए मशहूर माना जाता है, ऐसी स्थिति में भी मनेरी भाली फेज-1 और फेज-2 के गेट भी बंद थे। यहां पर इसी रात को बाढ़ से बांध की झील में देर तक नदी के साथ बहकर आये मलबे को रुकना पड़ा, जिसे अकस्मात खोलकर तटों पर निवास करने वाली आबादी के घरों व खेतों में सारा मलबा जमा हो गया था। इन सब स्थितियों को जानते हुए भी सबक नहीं मिला, इसके बावजूद भी 16-17 जून, 2013 को आयी जलयंकारी बाढ़ ने फिर से न केवल उत्तरकाशी के भटवाड़ी, डुंडा, चिंयालीसौड़ ब्लाक को ही नुकसान पहुंचाया बल्कि गढ़वाल क्षेत्र में मंदाकिनी, अलकनंदा, धर्मगंगा में बाढ़ व भारी वर्षा ने 7000 से अधिक लोगों की जिंदगी समाप्त करके रख दी।

मंदाकिनी नदी के सिरहाने से ही सुरंग बांधों का निर्माण जारी है, इसी तरह अलकनंदा के लगभग 250 किमी क्षेत्र में 12 से अधिक बांधों पर काम को रहा है। यहां पर सड़कों को चौड़ी ही इसलिए किया गया है ताकि बड़ी जेसीबी व क्रेनों को पहाड़ों के दूरस्थ क्षेत्रों तक निर्माण-कार्य हेतु पहुंचायी जा सकें। सड़कों के चौड़ीकरण तथा बांधों के निर्माण का मलबा इसी भांति मंदाकिनी और अलकनंदा में बेहिचक उड़ेला जाता रहा है। उत्तरकाशी जिले के भटवाड़ी ब्लाक, रूद्रप्रयाग जिले के अगस्तमुनि ब्लाक, उखीमठ ब्लाक, चमोली, जोशीमठ आदि ब्लाकों में आवागमन के साधनों की बहाली इतनी जल्दी नहीं हो सकती है जितना कहा जा रहा है।

भटवाड़ी ब्लाक में आंगी और लाटा के बीच सड़क का नामोनिशान नहीं है। गंगोरी से मनेरी तक के बीच में 3 स्थानों पर भारी भूस्खलन से मोटर सड़क ठप पड़ी हुई है। यहां लाटा, मल्ला, भटवाड़ी, सौरा, विशनपुर, क्यार्क, कुंजन, तिहार, सुनगर से आगे गंगनानी तक के बीच के कई गांव भागीरथी की ओर धंसते नजर आ रहे हैं। भागीरथी के आरपार के गदेरों ने भी भारी बाढ़ की स्थिति पैदा कर दी है। पूर्व में लोहारीनाग-पाला और पाला-मनेरी जल विद्युत परियोजनाओं के निर्माण के दौरान भी भारी मलबा भागीरथी नदी के किनारों पर जमा था, वह सबसे अधिक त्रासदी का कारण बना है। इसी तरह मंदाकिनी नदी पर फाटा-ब्यूंग, सिंगोली-भटवाड़ी, विष्णुप्रयाग आदि कई सुरंग बांधों के मलबे और भारी विस्फोटों से हिल चुके पहाड़ों की दरकने की घटनायें अब आम होती जा रही हैं।

भटवाड़ी ब्लाक की आपदा प्रभावित लगभग 35,000 की आबादी को 50-50 किमी पैदल चलकर उत्तरकाशी आना पड़ता है। उन्हें राहत और पुनर्वास के लिए प्रशासन के चक्कर काटने पड़ रहे हैं। यह जरूर है कि उत्तरकाशी के जिलाधिकारी डॉ. पंकज कुमार पाण्डेय बार-बार भटवाड़ी व हर्षिल में जाकर हैलीकॉप्टर द्वारा लोगों से मुलाकात करके वापस उत्तराकाशी पहुंचते रहते हैं। वे सड़क मार्ग की बहाली के लिए अभी तक आश्वासन ही दे सकते हैं। भटवाड़ी ब्लाक में इस समय सबसे बड़ी आपदा के शिकार प्रभावित लोगों के बाद यदि कोई है तो उनका नाम हैं ''घोड़े-खच्चर''। सरकार द्वारा भेजी जा रही राहत सामग्री में चावल की कीमत प्रति क्विंटल 900 रुपये है और खच्चर की पीठ का ढुलान प्रति क्विंटल 2200 रुपये

हैं। इसी मुनाफे के चक्कर में खच्चर मालिक जरा भी अपने पशुधन की प्रवाह नहीं कर पा रहे हैं। कई चढ़ाइयों को पार करते हुए खच्चर लोगों की सेवा में यहां पर तत्पर हैं। आपदा राहत के काम में स्वैच्छिक संगठनों की अहम भूमिका नजर आ रही है। इनसे संबंधित कार्यकर्ता दूरस्थ प्रभावित क्षेत्रों में पैदल पहुंच कर पीड़ितों की सेवा में राशन, तिरपाल, सोलर लाईट के अलावा विभिन्न सामग्रियों का वितरण कर रहे हैं। इन संस्थाओं के कई महत्त्वपूर्ण अनुभवों से भी पुनर्निर्माण के काम को सही राह मिल सकती है।

सांसद सतपाल महाराज ने संसद के विशेष सत्र में प्रभावित हजारों परिवारों को तात्कालिक राहत देने की मांग उठायी है, वहीं उत्तराखण्ड की सरकार प्रभावितों तक सब कुछ पहुंचाने का दावा कर चुकी है। इससे ऐसा लगता है कि भविष्य में राहत के बाद पुनर्वास एवं पुनःनिर्माण के काम काफी चुनौती भरा है। राज्य सरकार कुछ नियम-कानून बना भी ले तो आपसी खींचतान में प्रभावितों की अनदेखी की पूरी संभावना है।

उत्तरकाशी पहुंचने से पहले नालूपानी व धरासू में बार-बार भूस्खलन से सड़क पर आवाजाही पिछले 5-6 वर्षों से बाधित होती आ रही है। यह सड़क चौड़ीकरण के कारण नासूर बन गई है। स्थिति यहां तक पहुंच गई है कि कोई कह रहा है कि यहां पर साढ़े चार किमी लम्बी सुरंग बनाओ और कोई वैकल्पिक मार्ग का सुझाव दे रहा है। इसी झमेले में उत्तरकाशी पहुंचने वालों की सुरक्षित आवागमन लम्बे समय से नसीब नहीं हो पा रहा है। अतः यह जरूरी है कि पहाड़ी मार्गों से होकर जाने वाली सड़कों की चौड़ाई कितनी होनी चाहिए, इसको यहां की भौगोलिक संरचना व पहाड़ी संवेदनशीलता को नजरअंदाज करके कोई भी सड़क बनाना आसान नहीं होगा।

आश्चर्य की बात थी कि सन् 2003 में अक्टूबर-दिसम्बर तक लगातार बिना बारिश के उत्तरकाशी में वरुणावत भूस्खलन हुआ है जिस पर केंद्र के 250 करोड़ रुपयों को खर्च करने के बाद भी ताम्बाखाणी की सुरंग आज भी लोगों को भयभीत कर रही है। यह स्थिति बंदरकोट, चामकोट, बड़ेथी, धरासू आदि स्थानों पर अब नये वरुणावत पैदा हो गये हैं, यहां पर बार-बार भूस्खलन पिछले लम्बे समय से जारी है।

इस विषम स्थिति में उत्तरकाशी के व्यापारी, आमजन, पर्यटक और काम करने वाले विभिन्न संगठनों व संस्थाओं के बीच यह चर्चा गहरी हो गई है कि यहां से कहीं दूसरी जगह ही पलायन हो। इससे सावधान रहने के लिए वर्तमान में राज्य को कठिन प्रतिज्ञा करनी चाहिये। राज्य सरकार ने यह निर्णय लेकर कि नदियों के किनारे कोई निर्माण नहीं होगा, इसका स्पष्टीकरण नहीं हो सका है। क्या इसका अर्थ इस नाम पर लिया जाय कि नदियों के किनारों की दूर तक की आबादी को खाली करवाना है, या नदियों के किनारों को सुदृढ़ ही नहीं करना है। यदि ऐसा है तो जो नदियों के किनारों की आबादी है वह भविष्य में अधिक खतरे की जद में आने वाली है। ऐसी स्थिति पैदा करने से पलायन बढ़ेगा। अच्छा हो कि नदियों के किनारों पर आरपार मजबूत ढ़ालदार तटबंधों का निर्माण हो और व्यवसायिक खनन न हों, नदियों के किनारों को डम्पिंग से बचाया जाय, सुरंग बांधों के निर्माण पर रोक लगे, सड़क चौड़ीकरण पर प्रतिबंध लगाना है, शहरों व गांव से आ रहे गंदे नालों को नदियों में बहने न दिया जाय। बड़ी क्षमता के रिसाइक्लिंग व ट्रीटमेंट प्लांट लगने चाहिये। विकास व पुनःनिर्माण के नाम पर पहाड़ खाली न हों, लोगों को सुरक्षित वातावरण मिले, और उनकी जीविका के साधनों को लौटाया जाय। इसके लिए ग्राम समाज, नगर समाज के साथ मिलकर सरकारी योजनाओं का सही संचालन हो, लोगों को रोजगार भी मिले और प्रकृति संरक्षण के पारम्परिक रिश्ते को बनाये रखने की दिशा में कदम उठाना पड़ेगा। मजबूत पुनर्वास नीति बनाने की आवश्यकता है। जल, जंगल, जमीन पर लोगों के अधिकार होने चाहिये। इसके लिए मजबूत जलनीति, आपदानीति, जलवायु-नीति और भू-नीति के विषय पर क्या गंभीरता से पहले विचार नहीं होना चाहिए? ❑

कोई बात छिपाकर रखना नहीं चाहता

आपको धोखा देने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं है। यहां से कुछ ले जाने के लिए आपको यह विश्वास दिलाकर कि सब बातें सर्वथा ठीक होंगी, मैं आपको धोखा देना नहीं चाहता हूं। कांग्रेस की ओर से मैं सारी बाजी आपके सामने रख देना चाहता हूं। मैं मन में किसी तरह की बात, कोई बात छिपाकर रखना नहीं चाहता हूं। इसके बाद यदि कांग्रेस की नीति आपको स्वीकार हो तो मुझे अत्यन्त आनन्द होगा किन्तु यदि आपको वह स्वीकार नहीं है, यदि आज मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं आपका हृदय छू नहीं सकता और अपनी बात आप से मनवा नहीं सकता, तो जब तक आप सबका हृदय-परिवर्तन नहीं हो जाता और आप भारत के करोड़ों लोगों को यह अनुभव करने का मौका नहीं देते कि अन्त में उन्हें राष्ट्रीय सरकार मिल गयी है, तब तक कांग्रेस को भटकते रहना और आपके मत-परिवर्तन का प्रयत्न करते रहना होगा।

(लंदन, 19 नवम्बर,1931)

–महात्मा गांधी

चाल से खुशहाल

❑ अनुपम मिश्र

उत्तराखंड के उफरैंखाल में कुछ लोगों ने किसी सरकारी या बाहरी मदद के बिना जो किया है उसमें कई हिमालयी राज्यों के सुधार का हल छिपा है।

ढौंड गांव के पंचायत भवन में छोटी-छोटी लड़कियां नाच रही थीं। उनके गीत के बोल थे 'ठंडो पाणी मेरा पहाड़ मा, ना जा स्वामी परदेसा।' ये बोल सामने बैठे पूरे गांव को बरसात की झड़ी में भी बांधे हुए थे। भीगती दर्शकों में ऐसी कई युवा और अधेड़ महिलाएं थीं जिनके पति और बेटे अपने जीवन के कई वसंत 'परदेश' में ही बिता रहे हैं। ऐसे वृद्ध भी इस कार्यक्रम को देख रहे थे जिन्होंने अपने जीवन का बड़ा भाग 'परदेस' की सेवा में लगाया है और भीगी दरी पर वे छोटे बच्चे-बच्चियां भी थे, जिन्हें शायद कल परदेस चले जाना है। एक गीत पहाड़ों के इन गांवों से लोगों का पलायन भला कैसे रोक पायेगा? लेकिन गीत गाने वाली टुकड़ी गीत गाती जाती है। आज ढौंड गांव में है तो कल डुलमोट गांव में, फिर जंद्रिया में, भरनों में, उफरैंखाल में। यह केवल सांस्कृतिक आयोजन नहीं है। इसमें कुछ गायक हैं, नर्तक हैं, एक हारमोनियम, ढोलक है तो सैकड़ों कुदाल-फावड़े भी हैं जो हर गांव में कुछ ऐसा काम कर रहे हैं कि वहां बरसकर तेजी से बह जाने वाला पानी वहां कुछ थम सके, तेजी से बह जाने वाली मिट्टी वहीं रुक सके और इन गांवों में उजड़ गये वन, उजड़ गयी खेती फिर से संवर सके। आधुनिक विकास की नीतियों ने यहां के जीवन की जिस लय को, संगीत को बेसुरा किया है, उसे फिर से सुरीला बनाने वालों की टोली है यह दूधातोली की। पौड़ी गढ़वाल के दूधातोली क्षेत्र के उफरैंखाल में आज से कोई 21 बरस पहले अस्तित्व में आयी छोटी-सी यह टोली आज यहां के 136 गांवों में फैल गयी है और इस क्षेत्र में अपने काम को खुद करने का वातावरण बना रही है। अपने काम में है—अपने वन, अपना पानी, अपना चारा, अपना ईंधन और अपना स्वाभिमान।

इस टोली के विनम्र नायक हैं शिक्षक सच्चिदानंद भारती। वे उफरैंखाल के इंटर कॉलेज में पढ़ाते हैं। 1979 में कॉलेज की अपनी पढ़ाई पूरी करके वे पौड़ी जिले के अपने गांव गाडखर्क, उफरैंखाल लौटे थे। उन्हीं दिनों उन्हें पता चला कि उत्तराखंड के मध्य में स्थित दूधातोली क्षेत्र में वन निगम फर-रागा के पेड़ों का कटान कर रहा है। हिमालय में रागा प्रजापति भोजवृक्ष की तरह ही धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही है। मशहूर चिपको आंदोलन से प्रेरित भारती को लगा कि इस कटान को तो हर कीमत पर रोकना चाहिए, वे अपने कुछ साथियों के साथ दूधातोली वन क्षेत्र से जुड़े गांवों की ओर चल पड़े, पदयात्रा के माध्यम से जगह-जगह लोगों को यह समझाने की कोशिश की गयी कि यह वन सरकार का जरूर है पर इसके विनाश का पहला बुरा झटका इन्हीं गांवों को भोगना पड़ेगा। सब लोग साथ दें तो इस विनाश को रोका जा सकता है। इन्हीं बैठकों में से यह बात भी सामने आयी कि वन सरकार का है, लेकिन इस पर पहला हक तो उसके पास बसे गाँवों का ही होना चाहिए, दूधातोली में जगह-जगह सघन पदयात्राओं, बैठकों आदि का प्रभाव पड़ा, एक वन अधिकारी ने इस समस्या को समझने के लिए लोगों के साथ विवादित वन क्षेत्र का दौरा किया, फिर दैड़ा गांव में सब गांवों के साथ हुई बैठक में इस कटान को पूरी तरह रोक देने की घोषणा कर दी गयी। सत्य के आग्रह को सरकार ने स्वीकार किया।

ऐसी घटना उस क्षेत्र के लिए नयी ही थी। इससे दो बातें निकलीं—एक तो यह कि लोग एक हो जायें तो सरकार के गलत कामों, निर्णयों को भी रोका जा सकता है, बदला जा सकता है और दूसरी यह कि अब जब एक बड़े विनाश को रोक ही लिया गया है तो फिर इसी स्थान से वनों के संवर्धन का काम क्यों न शुरू किया जाय, इस काम को व्यवस्थित तरीके से करने के लिए मार्च, 1982 में 'दूधातोली लोक विकास संस्थान' बना। इसकी स्थापना के समय ही कुछ बातें बिलकुल साफ ढंग से तय की गयी थीं। अपने क्षेत्र में पर्यावरण संवर्धन का काम तो करना ही है पर इसमें संस्था का आधार वहीं के लोग तथा देशी साधन हों, इसका पूरा ध्यान रखा जायेगा। यह भी योजना बनी कि हर वर्ष चार शिविरों के माध्यम से यह सब काम किया जायेगा। जल्द ही समझ में आ गया कि वनीकरण करना है तो अपनी जरूरत के पौधे भी खुद ही तैयार करने पड़ेंगे। संस्था बनाने में शिक्षकों की भूमिका प्रमुख थी, इसलिए आगे की योजनाओं में उनका ध्यान सबसे पहले अपने छात्रों की तरफ गया। छात्रों ने अपने शिक्षकों की प्रेरणा से तरह-तरह के बीजों का संग्रह प्रारम्भ किया।

सबसे पहले इन लोगों ने अखरोट के पौधों की एक नर्सरी बनायी। इन पौधों की बिक्री प्रारम्भ हुई। वहीं के गांवों से वहीं की संस्था को पौधों की बिक्री से कुछ आमदनी होने लगी। यह राशि फिर वहीं लगने जा रही थी। एक के बाद एक शिविर लगते गए और धीरे-धीरे उजड़े वन क्षेत्रों में वनीकरण होने लगा। इन्हीं शिविरों में हुई बातचीत से यह निर्णय भी सामने आया कि हर गांव में अपना वन बने। वह साधन भी बने ताकि

ईंधन, चारे आदि के लिए महिलाओं को सुविधा मिल सके। इस तरह हर शिविर के बाद उन गांवों में महिलाओं के अपने नये संगठन उभरकर आये, ये 'महिला मंगल दल' कहलाये, ये महिला दल कागजी नहीं थे। कागज पर बने ही नहीं थे। कोई लेखा-जोखा, रजिस्टर, दस्तावेज नहीं। पूरे सच्चे मन से बने संगठन थे। संस्था दूधातोली के कार्यालय में भी इनकी गिनती या ब्यौरा देखने को नहीं मिलता। ऐसे महिला मंगल दलों की वास्तविकता तो उन गांवों में धीरे-धीरे ऊंचे उठ रहे, सघन हो चले तो वनों से ही पता चल सकती थी। अब पर्यावरण शिविर वर्ष में चार बार लगते हैं पर उनसे जन्मे महिला मंगल दल पूरे वर्ष भर काम करते हैं। गांव के वन की रक्षा व उसका संवर्धन उनकी मुख्य जिम्मेदारी होती है।

1993 के प्रारम्भ में सच्चिदानंद भारती ने अपने क्षेत्र में वनों के साथ पानी की परम्परा को भी समझना प्रारम्भ किया। पहाड़ों में ताल तो आज भी हैं, पर इनकी संख्या तेज ढलानों के कारण कम हो रही है। खाल और चाल नामक दो और रूप भी यहां रहे हैं जो पिछली सदी में लगभग मिट गये थे। उफरैंखाल नाम स्वयं इस बात का प्रतीक था कि कभी यहां पानी का अच्छा प्रबंध रहा होगा। खाल ताल से छोटा रूप है तो चाल खाल से भी छोटा है। ये ऊंचे पहाड़ों की तीखी ढलानों पर भी बनती रही हैं। भारती ने पानी की कमी और उससे जुड़ी अनेक समस्याओं को समझा और वनों के संवर्धन के साथ पहाड़ों में जल संरक्षण के काम को जोड़ा। दूधातोली के क्षेत्र में चाल बनाने का काम गाडखर्क गांव, उफरैंखाल से प्रारम्भ हुआ। आज इस क्षेत्र में कोई 35 गांवों में खाली पड़ी बंजर धरती पर पानी की कमी से उजड़ गये खेतों और अच्छे घने वनों तक में कोई 7000 चालें वर्ष भर चांदी की तरह चमकती हैं।

चालों की वापसी ने यहां अनेक परिवर्तन किये हैं। उजड़े खेतों में फिर से फसल लगने की तैयारी हो रही है। बंजर वन भूमि में साल भर पानी रहने के कारण प्रकृति स्वयं अनेक अदृश्य हाथों से उसमें घास और पौधे लगा रही है। ठीक पनप चुके वनों में और सघनता आ रही है। घास, ईंधन और पानी—इनके बिना पर्वतीय व्यवस्था चरमरा गयी थी। आज यहां फिर से जीवन का संगीत वापस लौट रहा है। चाल ने जंगलों की आग को भी समेटने में अद्‌भुत भूमिका निभाई है जो उत्तराखंड सहित देश के अन्य पर्वतीय क्षेत्रों में हर साल सैकड़ों करोड़ रुपये का नुकसान करती है। चालों ने सूख चुके नालों और छोटी नदियों को भी सरस कर दिया है।

इतना बड़ा लाभ बांटने वाली चाल स्वयं बहुत ही छोटी होती है। इस छोटेपन में ही इसका बड़प्पन छिपा है। जहां भी ठीक जगह मिली वहां पांच से दस घनमीटर के आकार की जल तलाई बनायी जाती है। जब ऊपर से नीचे तक पूरे ढलान को अनेक जल तलैयाएं अपने छोटे-छोटे आकार से ढंक देती हैं, तब पानी का अक्षय भंडार बन जाता है। पानी पहाड़ी ढलानों में यहां-वहां से बहता है, इसलिए जल तलाई भी यहां-वहां ही बनायी जाती है और इस तरह हर जगह पानी एकत्र होता जाता है। इन सबमें संग्रहित पानी धीरे-धीरे रिसकर नीचे घाटी तक आता है। यहां घाटी में चालों से बड़े ढांचे, यानी खाल या ताल बनाये गये हैं। इनमें भी अब पूरे वर्ष पानी का भंडार बना रहता है। कोई 50-100-200 रुपये में एक चाल बन जाती है। बनाने वाले इसे अपना काम मानकर बनाते हैं। इसलिए 50-100 की मदद भी कम नहीं मानते। वे इसे बनाते समय अपने को किसी का मजदूर नहीं मानते। वे इसके मालिक हैं और उनके स्वामित्व से सामाजिक समृद्धि साकार होती है। ऐसी सुदृढ़ समृद्धि पूरे समाज का आत्मविश्वास बढ़ाती है। उसका माथा ऊंचा करती है।

तब यदि अचानक कोई बड़ी लेकिन अव्यवहारिक योजना वहां आ जाये तो उस समाज के पैर नहीं डगमगाते। एक ऐसी ही योजना सन् 1998 में इस क्षेत्र की पूर्वी नयार घाटी में आयी थी। जलागम विकास का काम था। समर्थन था विश्व बैंक जैसी सम्पन्न संस्था का, पर इन गांवों ने उसका समर्थन नहीं किया। काम तो वहीं था, जिसे ये कर ही रहे थे—वनों का विकास, जलागम का विकास। पैसे की कोई कमी नहीं थी। परियोजना की लागत 90 करोड़ रुपये थी। गांव-गांव में जब इस योजना का बखान करने वाले बड़े-बड़े बोर्ड लग गये, तब भारती ने वन विभाग को एक छोटा-सा पत्र भर लिखा था। उन्होंने बहुत विनम्रता से बताया था कि इस क्षेत्र में वनों का, पानी का अच्छा काम गांव खुद ही कर चुके हैं—बिना बाहरी, विदेशी या सरकारी मदद के। तब यहां इन 90 करोड़ रुपये से और क्या काम करने जा रहे हैं आप? भरोसा न हो तो कुछ अच्छे अधिकारियों का एक दल यहां भेजें, जांच करवा लें और यदि हमारी बात सही लगे तो कृपया इस योजना को वापस ले लें।

शायद देश में पहली बार ही ऐसा हुआ होगा कि सचमुच वन विभाग का एक दल यहां आया और इस क्षेत्र में पहले से ही लगे, पनपे और पाले गये सुन्दर घने वनों को देख न सिर्फ चुपचाप लौट गया बल्कि अपने साथ 90 करोड़ की योजना भी समेट ले गया।

उफरैंखाल बताता है कि हिमालय के कुछ थोड़े से गांव तय कर लें तो वे विदेशी पैसे या सरकारी अनुदान के बिना एक शताब्दी की गलतियों को 20 वर्षों में सुधार कर कितना बड़ा काम खड़ा करके दिखा सकते हैं। इसमें केवल उत्तराखंड ही नहीं बल्कि सभी पर्वतीय क्षेत्रों के सुधार के बीज छिपे हैं। ❑

झारखण्ड में कम्पनियों की उग्रवादी आड़

❑ डॉ. मिथिलेश कुमार दांगी

2004 से 2008 के बीच भारत सरकार के कोयला मंत्रालय ने झारखंड स्थित कर्णपुरा के इलाके में 35 कंपनियों को कोयला खनन की लीज दी है। इन कंपनियों से लगभग 205 गांव विस्थापित होने वाले हैं। प्रारंभ से ही प्रभावित गांवों के ग्रामीण अपनी जीविका एवं जमीन की रक्षा के लिए अहिंसात्मक तरीके से संघर्षरत हैं। इन्हीं कंपनियों में एक सरकारी कंपनी है एन. टी. पी. सी.। एन. टी. पी. सी. के चार कोयला ब्लाक इस क्षेत्र में हैं उनमें से पकड़ी बरवाडीह कोयला ब्लाक पर लोगों का विरोध सबसे ज्यादा है। इस कंपनी को खनन का कोई अनुभव नहीं है। अतः उसने अपने खनन का ठेका आस्ट्रेलिया की थीस नामक कंपनी तथा अन्य कार्य डोको, टेक्प्रो सिस्टम जैसी कंपनियों को दे दिया है। यहां की जनता इन कंपनियों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को गांव में प्रवेश करने से रोकती है। वे संविधान की धारा 39 ख का हवाला देकर गांव की उत्पादक कंपनी बनाकर (जिसमें गांव के सभी वयस्क व्यक्तियों की हिस्सेदारी होगी) कोयला उत्पादन कर देश की जरूरत की पूर्ति करना चाहती हैं ताकि संसाधन पर समुदाय का अधिकार भी हो और सदुपयोग भी। यह एक ऐसा रास्ता होगा जिसमें विस्थापन भी नहीं होगा और सभी लोगों को सम्मान से जीने का हक भी मिलेगा।

एन. टी. पी. सी. एवं उनकी सहायक कंपनियों को क्षेत्र की आवाज को कुचलने का सबसे आसान तरीका लगा कि क्षेत्र में सक्रिय माओवाद को खतम करने के नाम पर बनी एवं पुलिस प्रशासन की सहयोगी समानांतर उग्रवादी संगठन जे. पी. सी. (झारखंड प्रस्तुति कमिटी) को आगे करना। इस संगठन के कुछ लोग उन्हीं कंपनियों में कार्यरत हैं। दूरभाष पर संगठन के प्रमुख से बातचीत के आधार पर यह संगठन डोको एवं थीस की समर्थक हैं। कई प्रमुख साथियों की गाड़ियां इन्हीं कंपनियों में चलाई जा रही हैं, ऐसी चर्चा है। कंपनी एवं जे. पी. सी. के बीच सांठगांठ को सिद्ध करने वाली एक घटना 7 जुलाई, 2013 को सुबह 10 बजे से दोपहर 1 बजे तक घटी।

एन. टी. पी. सी. से प्रभावित गांव कुसुम्भा जहां डोको एवं टेक्प्रो सिस्टम नामक कंपनी का कार्य चल रहा है। वहां पूर्व में भी ग्रामीणों ने लगभग 9 एकड़ जमीन दी है परंतु आज वे लोग ठगा-सा महसूस कर रहे हैं। कंपनी को इस गांव में अपने कार्य-विस्तार के लिए और जमीन की आवश्यकता है लेकिन गांव के किसान अब अपनी जमीन कंपनी को देना नहीं चाहते हैं। 7 जुलाई, 2013 को इन्हीं बातों से संबंधित एक सभा गांव वालों ने बुलाई थी जिसमें डॉ मिथिलेश कुमार दांगी (कर्णपुरा आंदोलन के प्रमुख साथियों में से एक हैं तथा देशव्यापी आजादी बचाओ आंदोलन के राष्ट्रीय संचालन समिति के सक्रिय सदस्य हैं) को भी बुलाया गया था। चूंकि डॉ. दांगी को वहां से अपने गांव जाना था अतः अपनी पत्नी एवं एक अन्य व्यक्ति अरुण कुमार सिंह के साथ इस सभा में शामिल हुए। सभा के दौरान जे. पी. सी. (झारखंड प्रस्तुति कमिटी) के तीन लड़के आए। एक के हाथ में राइफल थी, उसने डॉ. दांगी की कनपटी पर उसकी नाल सटाकर साथ में चलने को कहा। डॉ. दांगी को पत्नी एवं अरुण सिंह के साथ जे. पी. सी. के लोग कुसुम्भा के पश्चिम जंगल के समीप एक आम के बगीचे में ले गए। वहां पहुंचकर थोड़ी देर बातचीत के बाद राइफल वाला लगभग पचास मीटर दूर हट गया। शेष दो में से एक के हाथ में डंडा था। उसने डॉ. दांगी पर यह आरोप लगाना प्रारंभ किया कि उसने (डॉ. दांगी) ही डोको एवं थीस के अधिकारियों को पीटा है, यह कहकर उसने डॉ. दांगी पर डंडा से प्रहार शुरू किया। पत्नी के बीच-बचाव करने पर उसे भी सामने से हट जाने को कहा तथा ऐसा नहीं करने पर दोनों को जान से मार डालने की बात कही।

इधर इस घटना की जानकारी प्रभावित अन्य गांव के साथियों को हो गई थी। उन्होंने जे. पी. सी. के प्रमुख से बातचीत कर तीनों को छोड़ने को कहा। कई फोन आने पर उन लोगों ने छोड़ दिया और घर जाने को कहा। उस सभा में लोगों ने यह भी कहा था कि एक बार ग्रामीणों द्वारा काम रुकवाने पर जे. पी. सी. के यही लड़के राइफल की नोंक पर कार्यस्थल पर खड़े होकर काम शुरू करवाये थे तथा ग्रामीणों को यह धमकी दी थी कि भविष्य में कोई भी डोको के काम में बाधा पहुंचाने की कोशिश करेगा तो उसे गोली मार देंगे। इस धमकी से कुसुम्भा के लोग बुरी तरह डरे हुए हैं। इसके पूर्व भी जे. पी. सी. के हथियारबंद लोगों ने डोको की दो मशीनें बड़कागांव के चिरूडीह गांव में पहुंचाए थे।

इस घटना के बाद कर्णपुरा के आंदोलन के प्रमुख साथियों ने सभा कर यह निर्णय लिया कि इस घटना एवं आगे इस तरह की घटना न हो इसके लिए जे. पी. सी. के

प्रमुख के साथ बैठक की जाएगी तथा आगे के कार्यक्रम तय किए जायेंगे।

इस घटना ने कुछ प्रश्न खड़े किए हैं—

1. जंगल बचाने का स्वांग भरने वाले इस संगठन को क्या यह पता है कि कर्णपुरा की सभी कंपनियों को मिलाकर लगभग 20 हजार एकड़ वनभूमि नष्ट होने वाली है जिसमें कई लाख पेड़ नष्ट हो जायेंगे जिनमें से लाखों पेड़ों पर स्थानीय लोगों का जीवन सीधे तौर पर जुड़ा हुआ है, जैसे आम, महुआ, इमली, इत्यादि। हालांकि कंपनी काटे गए पेड़ों के स्थान पर आयातित अनुपयोगी पेड़ों को लगाने की बात करती है परंतु क्या उसका उपयोग गांव के विस्थापित लोग कर पाएंगे? पेड़ों के कटने तथा राज्य अथवा देश के किसी अन्य भाग में लगने पर पर्यावरणीय कमी की पूर्ति पूर्व स्थान पर हो पाएगी?
2. 40 करोड़ रुपये प्रति एकड़ कोयला के भंडारवाली जमीन का मुआवजा 15 लाख रुपए प्रति एकड़ तथा अल्प पेंशन पाने से लोगों का विकास होगा या कंपनी का?
3. उग्रवादी लड़कों द्वारा बार-बार डोको एवं थीस कंपनी के समर्थन में बात करना तथा इन कंपनियों के खिलाफ अपनी जीविका एवं जमीन बचाने के लिए संघर्ष करने वालों को राइफल का भय दिखाना तथा स्वयं खड़ा होकर कंपनी का काम कराना, क्या उनके रिश्ते बताने के लिए काफी नहीं है?
4. उग्रवाद खतम करने का दंभ भरने वाली सरकार की सरकारी कंपनी एवं उसकी सहायक कंपनियों द्वारा उग्रवादियों की सहायता कर जनता के खिलाफ उनका उपयोग करने से उग्रवाद खतम होगा?
5. क्या हिंसा को प्रतिहिंसा से दबाया जा सकेगा? *(पीएनएन)*

सोने की भूख को नियंत्रित करना आवश्यक

❑ डॉ. बद्री बिशाल त्रिपाठी

रत्न प्रसवा धरती के गर्भ से समाज को समान रूप से बहुमूल्य अनेकों धात्विक, गैर-धात्विक और ईंधन वाले खनिजों का वरदान प्राप्त है। धात्विक खनिजों में सोने की पीली चमक आदिकाल से परिवार, गृहस्थ, राजाओं, साधु-समाज और देवताओं के आकर्षण का केन्द्र रहा है। सोने के प्रति वैश्विक वृहत्तर समाज का यह आकर्षण लगातार बढ़ता जा रहा है। पिछले कुछ वर्षों से दुनिया में सोने की कीमतें लगातार तेजी से बढ़ती जा रही हैं, साथ-साथ सोने की मांग मुख्यतः आभूषण के लिए और बचतों को सुरक्षित धातु में बदल लेने के लिए होती थी, परन्तु अब सोने की मांग विनियोग के लिए होने लगी है इसलिए दुनिया अपनी बचतें सोने में बदल लेने को आतुर है। सोने की मांग खाद्यान्नों जैसी पूर्ण बेलोचदार हो गयी है। सोना जो व्यापार का माध्यम था, जो अंतर्राष्ट्रीय मुद्रावत् प्रयोग होता था, अब स्वयं व्यापार की मद बन गया है।

भारत में सोने के प्रति आकर्षण ऐतिहासिक है। जिसका एक कारण भारत में सोने की बहुतायत भी थी। सोने की बहुतायत का आधार भारत का समृद्ध निर्यात व्यापार था। विश्व व्यापार में ब्रिटिश पूर्व का भारत सबसे बड़ा भागीदार था। पौराणिक आख्यान यह बताते हैं कि भारतीय व्यापारी अपनी नावों में विनिर्मित सामान और मसाले भरकर बाहर जाते थे तथा सोना, चांदी और अन्य बहुमूल्य धातुएं और खनिज भरकर वापस आते थे। यूरोपीय कंपनियां भी जब भारत में व्यापार करने आयीं तो यूरोप के पास सोना और चांदी के अलावा कोई ऐसी वस्तु न थी जिसे भारत में बनी वस्तुओं के बदले दे सके। ब्रिटिश पार्लियामेंट ने एक कानून बनाकर ईस्ट इंडिया कंपनी को 75000 पौंड का सोना और चांदी प्रतिवर्ष भारत ले जाने की अनुमति दी थी ताकि भारत से आयातों की कीमत दी जा सके। दुनिया के व्यापार में भारत 1700 ई. में 23 प्रतिशत का भागीदार था। इस प्रकार व्यापार के रास्ते भारत में सोना-चांदी आता रहा और भारत सोने की चिड़िया बना रहा। अंग्रेजों के समय से व्यापार की हालत बदल गयी। परंतु सोने के प्रति आकर्षण बना रहा। अपने देश में सोने के ज्ञात भंडार कम हैं केवल तीन सक्रिय खदानें हैं। मुख्य रूप से कोलार और हट्टी खदानों से सोना निकाला जाता है। भारत में सोने की खदानें तीन हजार मीटर तक गहरी हो गयी हैं। वे आज दुनिया की सबसे गहरी खदानों में हैं। अत्यन्त गहरी हो जाने के कारण इनसे सोना निकालना अनार्थिक-सा हो गया है। कुछ सोना नदियों के बहाव-क्षेत्र और कुछ ताम्बे की खदानों में यत्र-तत्र मिल जाता है।

उत्पादन के मुकाबले भारत में सोने की खपत बहुत अधिक है और लगातार बढ़ रही है। भारत में सोने का कुल उपयोग 2006-07 में 722 टन था जो क्रमशः बढ़कर 2011 में 933 टन हो गया। भारत दुनिया के सबसे बड़े सोना उपभोक्ताओं में है। दुनिया में सोने के कुल उपयोग का 27 प्रतिशत भारत में उपयोग होता है। खपत के हिसाब से सोने का घरेलू उत्पादन अत्यन्त कम है। देश में लगभग 2 टन सोने का प्रतिवर्ष उत्पादन होता है। यद्यपि 2011-12 में 28 टन सोने का उत्पादन हुआ था।

इस प्रकार भारत में सोने का घरेलू उत्पादन, घरेलू उपयोग का मात्र 0.3 प्रतिशत है। मांग के संदर्भ में यह नगण्य उत्पादन है। इसलिए सोने की घरेलू मांग पूरा करने के लिए देश में सोने का भारी आयात किया जाता है। पेट्रोलियम के बाद सोना देश की सबसे बड़ी आयात की मद है। सोने का आयात मूल्य 2011-12 में देश के कुल आयात मूल्य का 11.3 प्रतिशत था। सोने का आयात 2001-02 में 4.2 अरब डालर का था। सोने का आयात 2011-12 में लगभग 58 अरब डालर का हो गया। सोने का आयात मुख्य रूप से स्विटजरलैंड, यू. ए. ई. और दक्षिण अफ्रीका से किया जाता है।

देश में सोने की मांग बढ़ने के अनेक कारण हैं। हमारा सोने से अत्यन्त प्रेम ऐतिहासिक है। सौन्दर्य-वृद्धि, भाग्योदय, सजावट, मूल्य संचय, लाभकारी व्यापार, औषधी निर्माण और अब सट्टा उद्देश्य के लिए भी सोने की मांग होती है। सोना धारण करना और रखना सामाजिक प्रतिष्ठा से भी जुड़ा है। सोना धारण करके हम विशिष्ट होने का सुख अनुभव करते हैं। सोने की ग्राह्यता सर्वाधिक है। इसलिए इसका प्रयोग अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा के रूप में होता है। यह पूर्वोपाय हेतु सरकार, परिवारों और महिलाओं के लिए सुरक्षा धातु है। सोने के आभूषणों के प्रति हमारा पारम्परिक लगाव है। महिलाओं में सोने के प्रति विशेष लगाव का एक प्रमुख कारण आर्थिक असुरक्षा भी है। महिलाओं के पास जो आभूषण होते हैं, बहुधा वही एकमात्र सम्पत्ति होती है, जिसपर उनका अधिकार होता है। भूमि-भवन स्वामित्व तो महिलाओं के पास अभी भी अत्यन्त कम है। सरकार भी सोने का भंडार बनाती है। रिजर्व बैंक के पास लगभग 558 टन सोने का भंडार है। देश में 1991-92 में जब विदेशी मुद्रा परिसम्पत्तियों का भंडार अत्यन्त कम हो गया था तब रिजर्व बैंक ने अपने सोने के भंडार से 46 टन सोना विदेशों विशेषकर बैंक ऑफ इंग्लैण्ड में गिरवी रखकर विदेशी विनिमय प्राप्त किया था।

वैश्विक वित्तीय संकट ने सोने की भूख तीव्र कर दी तथा सोने की मांग संरचना में परिवर्तन कर दिया। कीमत में भारी वृद्धि कर दी। विश्व स्तर पर सोने की कीमत 2008-12 की अवधि में दो गुना से अधिक हो गयी। सोने की कीमतों में उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण लोगों ने अपनी बचत सोने में रखना अधिक लाभदायक समझा। आभूषण और बचत करने के लिए सोना और चांदी अतीत से प्रमुख माध्यम रहे हैं। अभी भी सोने की मांग मुख्य रूप से आभूषण और विनियोग के लिए होता है यद्यपि अभी भी सोने की कुल मांग में आभूषण का अंश अधिक है। परन्तु यह मांग मर्यादित रही है। बहुधा कालिक, प्रासंगिक और उत्सव सापेक्ष रही है। परन्तु हाल के वर्षों में गैर आभूषण प्रयोग के लिए सोने की मांग अधिक बढ़ी है। अब शीघ्र लाभकारी और व्यापार के लिए सोने की मांग बढ़ रही है। देश में सोने की कुल खपत में विनियोग और व्यापार के लिए 2011 में 39 प्रतिशत सोना खरीदा गया। यह प्रवृत्ति सार्वत्रिक और संगठित है। ऊंची स्फीति की दशा में वित्तीय प्रलेखों पर प्रतिफल की दर अत्यन्त कम हो जाती है। भारत में भी यही हुआ। लोगों ने अपनी बचत स्वर्ण क्रय में लगाना आरम्भ किया। सोना प्राथमिकता वाली अनिवार्य जरूरत नहीं है। इसका मूल्य आभासी है। लगाव मनोवैज्ञानिक है। स्वर्ण आभूषण एक विलासिता मात्र है तथापि सोने की मांग बढ़ती ही जाती है। जिस प्रकार पूंजी बाजार में विदेशी संस्थागत निवेशकों की भारी बिकवाली से खलबली मच जाती है। बाजार गिरने से छोटे-छोटे निवेशकों के जीवन भर के पसीने की कमाई डूब जाती है, उसी प्रकार भारी बिकवाली की दशा में सोने के बाजार में भी भारी गिरावट सम्भव है। इसलिए सोने खरीदने की अंधी दौड़ से बचना और खनिज ईंधन के प्रयोग को मर्यादित करना आवश्यक है।

बढ़ती स्वर्ण क्षुधा ने चालू खाते पर भुगतान संतुलन का घाटा बढ़ाकर देश के समक्ष संकट की दशा उत्पन्न कर दिया है। भारत का व्यापार घाटा 2007-08 में 91.5 अरब डालर था जो 2011-12 में 190 डालर हो गया। व्यापार घाटा 2007-08 में जीडीपी का 7.4 प्रतिशत था जो 2011-12 में 10.2 प्रतिशत हो गया। व्यापार घाटे की यह चौड़ी खाई कुछ सीमा तक विदेशी मुद्रा की प्राप्तियों से पूरी होती है। फिर भी घाटा रह जाता है। इसे भुगतान संतुलन के चालू खाते का घाटा कहा जाता है। चालू खाते पर भुगतान संतुलन का घाटा 2007-08 में लगभग 15.7 अरब डालर था जो 2011-12 में लगभग 78.1 अरब डालर हो गया। चालू खाते का यह घाटा 2007-08 में जीडीपी का 1.3 प्रतिशत था जो 2011-12 में बढ़कर जीडीपी का 4.2 प्रतिशत हो गया। बढ़ते व्यापार घाटे और चालू खाते पर घाटे का एक मुख्य कारण सोने का भारी मात्रा में आयात है। यह अनुमान है कि व्यापार घाटे में 30 प्रतिशत का योगदान स्वर्ण आयात का है। रिजर्व बैंक के एक अध्ययन दल ने उल्लेख किया है कि यदि स्वर्ण आयात में 2011-12 में 39 प्रतिशत के बजाय 2008-11 की अवधि की भांति 24 प्रतिशत प्रतिवर्ष वृद्धि हुई होती तो आयात व्यय 6 विलियन डालर कम होता और चालू

खाते का घाटा जीडीपी में 4.2 प्रतिशत के बजाय 3.9 प्रतिशत होता। स्पष्टतः भारी मात्रा में स्वर्ण आयात के कारण घाटा बहुत अधिक हो गया है। स्वर्ण आयात में मूल्यानुसार 2008-12 की अवधि में 4 गुना वृद्धि हुई है। स्वर्ण आयात का स्फीति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध बन गया है। ऊंची स्फीति की दशा में वित्तीय प्रलेखों पर वास्तविक प्रतिफल घटने से सोने में विनियोग बढ़ने लगता है और सोने का आयात बढ़ने लगता है। इस प्रवृत्ति से भारत में हाल के वर्षों में सोने का आयात तेजी से बढ़ा।

भारत में बचत की दर बहुत ऊंची है अब भी जीडीपी का लगभग 30 प्रतिशत बचत है। जीडीपी में बचत का अंश 2007-08 में 36.8 प्रतिशत हो गया था। पश्चिम के देशों से पृथक मर्यादित उपभोग और गाढ़े दिनों के लिए बचत करना यहां की जीवन-पद्धति है। यहां वे लोग भी पूर्वोपाय के रूप में कुछ बचत करते हैं जिनकी आय अत्यन्त कम है जिनकी सराहना की जानी चाहिए। परन्तु मितव्ययिता से बचाये गये धन का एक हिस्सा बाहर जा रहा है और बदले में व्यर्थ की धातु के कुछ टुकड़े मिल रहे हैं, मात्र मनोवैज्ञानिक और भासित संतुष्टि के लिए। यदि यही धन देश के भीतर खेती, उद्योग विनिर्माण, अवस्थापना में लगे तो गुणक प्रभाव के साथ उत्पादन, रोजगार और आय बढ़ेगी।

इस स्थिति में सोने की भूख घटाना और नियंत्रित करना आवश्यक है। आजादी के बाद सोने की भूख को हानिकारक मानकर इसके आयात पर पाबन्दी लगायी गयी लेकिन 1993 में सोने के आयात पर प्रतिबन्ध हटा लिया गया। आयात शुल्क भी कम कर दिया गया। परन्तु स्वर्ण आयात से उत्पन्न कठिनाइयों से बचने के लिए इसका आयात नियंत्रित किया जाना आवश्यक है। परिवहन और ऊर्जा की बढ़ती दबावकारी जरूरतों के कारण खनिज तेल के आयात में कमी किया जाना इस समय अत्यन्त कठिन है। ऊर्जा के वैकल्पिक नव-करणीय स्त्रोतों को विकसित करने में अभी बहुत प्रयास किया जाना है। इसलिए व्यापार घाटे में कमी करने के लिए सोने का आयात घटाया जाना चाहिए। स्वर्ण के आयात को नियंत्रित करने के लिए सरकार ने कुछ प्रयास आरम्भ कर दिया है। सरकार ने बजट 2012-13 में स्टैंडर्ड सोने पर आयात शुल्क 2 प्रतिशत से बढ़ाकर 4 प्रतिशत तथा गैर-स्टैंडर्ड सोने पर आयात शुल्क 5 प्रतिशत से बढ़ाकर 10 प्रतिशत कर दिया गया है। इन उपायों से स्वर्ण आयात में कुछ कमी आयी है। परन्तु 2013-14 के बजट प्रावधान में विदेश यात्रा से लौटने पर शुल्क मुक्त 50 हजार रुपये तक के आभूषण महिलाओं को लाने की अनुमति प्रदान की गयी है। यह भी स्वर्ण आयात को प्रोत्साहन है जो धन भारत में पढ़े लिखे लड़के-लड़कियों ने विदेशों में कड़ी मेहनत से कमाया, वह वहीं रह गया। साथ में मृत धातु आयी। भारत आभूषण बनाने और निर्मित आभूषण निर्यात करने के लिए भी स्वर्ण आयात करता है और मुख्य रूप से यू.ए.ई. हांगकांग और यू.एस.ए. को स्वर्ण के आभूषण निर्यात करता है। रत्न और आभूषण का निर्यात कुल निर्यात में बहुत थोड़ा अंश है। इसलिए रत्न और आभूषणों के निर्यात में धातु और रत्न की मात्रा के बजाय मूल्य संवर्धन पर ध्यान केन्द्रित की आवश्यकता है। *(पीएनएन)*

कविता

इनसानियत जिंदाबाद

–आदिल सरफरोश

फिर हुए दंगे
मचा शोर
हुई चीख पुकार!
फिर आई आवाजें
मारो काटो
काटो मारो!
फिर लगे उद्घोष
जय श्री राम
नार-ए-तकबीर!
फिर जले घर
टूटे मंदिर-मस्जिद
लुटी दुकानें!
फिर चले त्रिशूल
लहराई तलवारें
दनदनाये असलाह
फटे बम और बारूद!
फिर लूटी इज्जत
हुए कत्ल
गिरी लाशें
बहा खून!
फिर शर्मसार हुई दरिद्रता
बंटी एकता
छिन्न अखण्डता!
फिर गिरी लाशों से
निकलीं सफेदपोश रूहें
और चल पड़ीं गांधी चौक!
फिर मुस्करायी क्षतिग्रस्त गांधी-मूर्ति
और रूहें चीखने लगीं
इनसानियत जिंदाबाद....
इनसानियत जिंदाबाद....
इनसानियत जिंदाबाद। ❑

कन्याभ्रूण हत्या : एक त्रासदी

❑ आदिल खान

बड़ी अजीब विडम्बना है, एक ओर तो हमारे सभ्य एवं संस्कारवान समाज में नारी को सरस्वती, दुर्गा, काली व पार्वती आदि देवियों के रूप में पूजा जाता है, उनके चरणों को छूकर अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति का आशीर्वाद मांगा जाता है, वहीं दूसरी ओर अपनी तुच्छ मानसिकता का परिचय देते हुए एवं पुत्र प्राप्ति के लोभ में देवी-रूपी कन्याओं को जन्म लेने से पहले ही गर्भ में मार दिया जाता है।

वैसे तो भारतीय कानून की परिभाषा में कन्याभ्रूण हत्या एक जघन्य एवं दंडनीय अपराध की श्रेणी में आता है। बावजूद इसके हमारे मुल्क में शायद ही कोई ऐसा दिन जाता हो जब सैकड़ों कन्याओं को गर्भ में न मारा जाता हो। और तो और अंधी कमाई की जुगाड़ में लगे एवं धरती पर भगवान का साक्षात रूप माने जाने वाले डॉक्टर भी बेटियों को गर्भ में मारने का धंधा धड़ल्ले से कर रहे हैं। अवैध क्लीनिक एवं मेडिकल जांच सेंटर लिंग जांच एवं अवैध गर्भपात के अड्डे बनकर रह गये हैं। पुलिस के संरक्षण में चलने वाला कन्याभ्रूण जांच एवं अवैध गर्भपात का धंधा दिन-रात प्रगति पर अग्रसर है। कन्याभ्रूण हत्या भारतीय आदर्श समाज एवं कानून के लिए एक प्रश्नचिह्न बनकर रह गयी है। यह भी भारत के लिए बड़े ही दुर्भाग्य की बात है कि पुरुष-स्त्री लिंगानुपात में असमानता थमने का नाम नहीं ले रही है। आखिरकार हम कब तक बेटियों के दमन का मूकदर्शक बने देखते रहेंगे।

भारतीय जनगणना-2011 (लिंगानुपात)

राज्य

राज्यों के नाम	**महिलाएं**
मध्य प्रदेश	930
राजस्थान	926
महाराष्ट्र	925
उत्तर प्रदेश	908
आन्ध्र प्रदेश	992
जम्मू-कश्मीर	883
गुजरात	918
कर्नाटक	968
बिहार	916
उड़ीसा	978
तमिलनाडु	995
प. बंगाल	947
अरुणांचल प्रदेश	920
असम	954
हिमाचल प्रदेश	974
पंजाब	893
हरियाणा	877
केरल	1084
मेघालय	986
मणिपुर	987
नागालैंड	931
त्रिपुरा	961
सिक्किम	889
गोवा	968
छत्तीसगढ़	991
उत्तराखंड	963
झारखंड	947
मिजोरम	975

केन्द्रशासित राज्य

दिल्ली	866
पांडिचेरी	1038
चंडीगढ़	818
लक्षदीप	946
दमनदीप	618
दादर नगर हवेली	775
अंडमान निकोबार दीप समूह	878

* *उपर्युक्त राज्यवार आंकड़े 1000 पुरुषों पर है।*

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत के कुल 28 राज्यों में से एकमात्र राज्य केरल में 1000 पुरुषों पर 1084 महिलाएं हैं। शेष सभी राज्यों में महिलाओं की संख्या पुरुषों की अपेक्षा बहुत कम है। हरियाणा, सिक्किम, जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश व बिहार में तो लिंगानुपात की स्थिति बहुत दयनीय एवं चिन्ताजनक है। केन्द्रशासित प्रदेशों पर एक दृष्टि डालें तो एकमात्र केन्द्रशासित प्रदेश पांडिचेरी में 1000 पुरुषों पर 1038 महिलाएं हैं। शेष अन्य राज्यों में लिंगानुपात में स्त्रियों की दशा खतरे में नजर आ रही है। दमनदीप में स्त्रियों की संख्या घटकर 618 पर सीमित हो गयी है। देश का दिल और दिलवालों का शहर कही जाने वाली दिल्ली में महिलाएं 866 की संख्या पर ठहर गयी हैं।

सच कहा जाये तो सिर्फ डॉक्टरों, अवैध नर्सिंग होम और भ्रष्ट पुलिस अफसरों को दोष देकर हम अपनी जिम्मेदारी से मुंह नहीं मोड़ सकते हैं। कन्याभ्रूण हत्या तो हमारे समाज की एक मानसिक बीमारी है। हमें इस मानसिक बीमारी के उपचार की आवश्यकता है। साथ ही यह भी समझना होगा कि इक्कीसवीं सदी की भारतीय नारियां हर क्षेत्र में अपनी सफलता के झंडे गाड़ दी हैं। हमारे मुल्क में महिलाओं की सफलताओं की कहानियां भरी पड़ी हैं, हमें बस उनसे सबक लेने की आवश्यकता है।

मानवीय दृष्टिकोण से कन्याभ्रूण हत्या एक ऐसा अपराध है जिसे कानून तो क्या स्वयं ईश्वर भी माफ नहीं कर सकता। हमें अपनी मानसिकता को बदलते हुए पुत्र-पुत्री के भेद को मिटाना ही होगा। जिस राष्ट्र में महिलाओं का मान-सम्मान न हो वह राष्ट्र कभी प्रगति नहीं कर सकता है। हम सबको मिलकर कन्याभ्रूण हत्या के विरुद्ध लामबन्द होकर नारी सम्मान की भारतीय इबादत लिखनी ही होगी। ❑

सूचना के अधिकार के विरोध में सत्ता-विपक्ष एकजुट

❑ रोली शिवहरे

राजनीतिक गलियारों में हलचल है। आश्चर्यजनक रूप से सभी दलों के नेता एक स्वर में एक जैसी बात कह रहे हैं। अपनी-अपनी ढफली बजाने वाले एकजुट इसलिए हैं, क्योंकि इस बार तलवार उन पर ही लटकी है। हाल ही में केन्द्रीय सूचना आयोग द्वारा दिये गये फैसले ने इनकी नींद उड़ा दी है। यह फैसला राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार के दायरे में लाने के संदर्भ में है। इस आदेश को देशभर में वाहवाही मिल रही है, इसका स्वागत किया जा रहा है और दुखी हैं तो सिर्फ राजनीतिक दल।

कांग्रेस के प्रवक्ता कहते हैं कि इससे लोकतांत्रिक संस्थाओं को नुकसान पहुंचेगा। वहीं भारतीय जनता पार्टी और जनता दल के नेताओं का कहना है कि दलों से सवाल करने के लिए चुनाव आयोग काफी है और सूचना आयोग को उन पर सवाल करने का कोई हक नहीं। इसी प्रकार वाम दलों ने भी इस आदेश पर नाराजगी दिखायी है। कुछ नेताओं का कहना है कि वे इस फैसले को उच्च न्यायालय में चुनौती देंगे।

यह फैसला 3 जून, 2013 को केन्द्रीय सूचना आयोग की पूर्ण पीठ जिसमें की मुख्य सूचना आयुक्त सत्यानन्द मिश्र और सूचना आयुक्त के रूप में एम. एल. शर्मा एवं श्रीमती अन्नपूर्णा दीक्षित द्वारा एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक राईट्स और सुभाष अग्रवाल द्वारा लगायी गयी याचिका के सम्बन्ध में दिया गया। यह प्रक्रिया 2010 से शुरू हुई जब एडीआर (एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक राईट्स) छह राष्ट्रीय राजनीतिक दलों (भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी, एनसीपी (राष्ट्रवादी कांग्रेस दल) व भारतीय कम्युनस्टि पार्टी को मिलने वाले चन्दे की जानकारी मांगी। तब इन सभी दलों ने यह कहते हुए सूचना देने से मना कर दिया कि वे सूचना के अधिकार के दायरे में नहीं आते।

अब सवाल यही उठता है कि ये सभी सूचना के अधिकार के दायरे में आते हैं कि नहीं? इस बात को लेकर केन्द्रीय सूचना आयोग में शिकायत दर्ज की गयी। उस शिकायत पर करीब ढाई वर्ष लगातार सुनवाई पर सुनवाई होती रही। अंत में 3 जून को आयोग द्वारा राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार के दायरे में लाने का आदेश पारित किया गया। इस आदेश में आयोग द्वारा मुख्य रूप से सूचना का अधिकार कानून की धारा 2(ज) का उपयोग किया है, जो स्पष्टतौर पर कहती है कि ''कोई ऐसा गैर सरकारी संगठन जो समुचित सरकार द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध करायी निधियों द्वारा सारभूत रूप से वित्तपोषित हो।'' इस धारा से यह स्पष्ट है कि राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार के दायरे में आना चाहिए क्योंकि उन्हें कई जगह सस्ती दरों या फिर मुफ्त में सरकार द्वारा जमीन दी गयी है। आयकर कानून के तहत भी इन पार्टियों को आयकर में पूरी तरह से छूट है।

हमारे लोकतांत्रिक ढांचे में इन दलों द्वारा जो भूमिका निभायी जा रही है वह उनके सार्वजनिक चरित्र की ओर इशारा करती है। साथ ही सूचना के अधिकार अधिनियम की प्रस्तावना में यह स्पष्ट है कि यह एक ऐसा कानून है जो भ्रष्टाचार को रोकने के लिए और शासन को जनता के प्रति जवाबदेहिता लाने में मदद करेगा। इसलिए राजनीतिक दल भी अपने सार्वजनिक जीवन में पारदर्शिता की घोषणा करके एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

राजनीतिक दलों के लिए चंदे में पारदर्शिता लाना लोकतांत्रिक ढांचे में महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यहीं से राजनीतिक भ्रष्टाचार शुरू होता है। पिछले कुछ समय से बड़े-बड़े कॉरपोरेट घरानों द्वारा राजनीतिक दलों को चुनाव के लिए धन दिये जाने के आरोप लगे हैं, जिसकी वजह से कई बार नीतियों में उनके हिसाब से परिवर्तन करने की बात भी सामने आयी है। 'इलेक्शन वाच' नामक एक संगठन के विश्लेषण में यह साफ निकलकर आया है कि कई कारपोरेट घराने दोनों ही पार्टियों (सत्ताधारी-विपक्ष) को चंदा देते हैं।

पारदर्शिता के बारे में तो सर्वोच्च न्यायालय ने एक आदेश में स्पष्ट किया था कि चुनाव लड़ने वाले व्यक्ति को अपनी सम्पत्ति, आपराधिक रिकॉर्ड, शिक्षा इत्यादि की जानकारी सार्वजनिक करनी होगी। ऐसा करने के पीछे मंशा सिर्फ यह थी कि जनता जिस व्यक्ति को चुनने वाली है उसके बारे में उसे सम्पूर्ण जानकारी हो। इसलिए लोकतंत्र की बातें करने वाले दल पारदर्शिता अर्थात् सूचना के अधिकार के दायरे से दूर क्यों रहें? इसके अलावा राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार के दायरे में लाने से इन दलों के आंतरिक लोकतंत्र को भी मजबूती मिलेगी। *(सप्रेस)*

पुरस्कार वितरण समारोह

गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र, गांधी भवन, जोधपुर में 25 जुलाई, 2013 को 'सर्वोदय-विचार परीक्षा' के 31 केन्द्रों के प्रेरकों एवं वरीयता प्राप्त 145 विद्यार्थियों को पुरस्कार छगन बहन की स्मृति में मीरा संस्थान के सहयोग से प्रदान किये गये। **–डॉ. भावेन्द्र शरद जैन**

ग्रामशक्ति की एक और जीत

❑ सुनील

31 जुलाई, 2013 को मध्य प्रदेश के मंडला जिले में प्रस्तावित चुटका परमाणु बिजली कारखाने की जनसुनवाई थी। व्यापक जन विरोध को देखते हुए प्रशासन को इसे स्थगित करने का फैसला करना पड़ा। जनसुनवाई की पूरी तैयारी हो गयी थी, एक विशाल शामियाना भी लगाया जा चुका था, जिसमें करीब 16 लाख रुपया खर्च हुआ होगा।

गौरतलब है कि 24 मई को जनसुनवाई आयोजित की गयी थी, जिसे भी जन विरोध की आशंका के चलते प्रशासन ने स्थगित कर दिया था। तब भी 16 लाख का टेंट लगाया जा चुका था। इस बार प्रशासन ने ज्यादा तैयारी की थी। जनसुनवाई का स्थान चुटका से बदलकर 15 किमी दूर मानेगांव में रखा था, जहां पर कर्मचारियों के लिए कॉलोनी बननी है और जहां विरोध इतना संगठित नहीं है। प्रचार, प्रलोभन आदि का भी खूब प्रयोग किया गया। कारखाने के विरोध में प्रचार कर रहे कार्यकर्ताओं को पुलिस ने धमकाने-डराने की भी कोशिश की। मंडला जिले के पुलिस अधीक्षक ने भी इन गांवों का दौरा किया और ग्रामीणों से चर्चा की। पिछली बार विरोध सभा में बरगी जलाशय (जिसके किनारे यह कारखाना लगेगा) के उस पार सिवनी जिले के गांवों से भी लोग बड़ी संख्या में नाव से आये थे। ये गांव भी चुटका की तरह बरगी बांध से विस्थापित हैं, आदिवासी हैं और इस आंदोलन को समर्थन दे रहे हैं। इस बार जलाशय में चलने वाली नावों को रोकने की भी असफल कोशिश की गयी। इसके बावजूद जन विरोध दबता हुआ नहीं दिखा।

यह भी उल्लेखनीय है कि इस परियोजना से सीधे प्रभावित होने वाले (जिनकी जमीन जायेगी) तीनों गांव—चुटका, टाटीघाट और कुंडा—की ग्रामसभाएं सर्वसम्मति से इस परियोजना के विरोध में प्रस्ताव पास कर चुकी हैं। यह पांचवी अनुसूची के तहत अधिसूचित आदिवासी इलाका है और पेसा कानून के तहत किसी भी परियोजना के लिए ग्रामसभा की सहमति अनिवार्य है। हाल ही में उड़ीसा के नियमगिरि इलाके में वेदांत कंपनी की एलुमिनियम-बॉक्साईट परियोजना के विषय में सर्वोच्च न्यायालय ने भी ग्रामसभा के फैसले को अंतिम बताया। वहां ग्रामसभाएं चल रही हैं। अभी तक वहां की सातों ग्राम सभाएं परियोजना के विरोध में अपना मत जाहिर कर चुकी हैं।

चुटका परमाणु संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों ने 25 जुलाई को जबलपुर में एक पत्रकार वार्ता करके चेतावनी दी थी कि जान देंगे पर जन सुनवाई नहीं होने देंगे। 25 जुलाई से मानेगांव में जन सुनवाई के विरोध में धरना भी शुरू कर दिया गया था। गांव-गांव में विरोध पोस्टर लगा दिये गये थे और दीवाल लेखन हो गया था। नतीजतन दूसरी बार प्रशासन को इसे स्थगित करने का फैसला करना पड़ा। शायद प्रदेश सरकार आगामी नवंबर में होने वाले विधानसभा चुनावों को देखते हुए आदिवासियों से ज्यादा टकराव का जोखिम नहीं लेना चाहती है। यह शायद पहली बार हुआ है कि किसी परियोजना की जन सुनवाई को प्रबल जन विरोध के कारण दो बार स्थगित करना पड़ा हो।

30 जुलाई को परमाणु बिजलीघर के विरोध में मानेगांव में एक सभा रखी गयी थी जो विजय सभा और जुलूस में बदल गयी। इसे समाजकर्मी संदीप पाण्डे के अलावा स्थानीय संगठनों के प्रमुख साथियों ने संबोधित किया। बरगी बांध विस्थापित संघ और जबलपुर के कई नागरिक संगठन इसमें पूरी मुस्तैदी से लगे हुए हैं। एक प्रमुख भूमिका गोंडवाना गणतंत्र पार्टी की है, जिसका इस इलाके में अच्छा जनाधार है। प्रदेश के जन संगठनों के 'जन संघर्ष मोर्चा' ने भी इस आंदोलन को सक्रिय समर्थन दिया है। भोपाल में भी इस आंदोलन का एक अच्छा समर्थक समूह बन गया है और वहां से युवकों की टीम ने दोनों बार एक हफ्ते पहले आकर परमाणु बिजली के विरोध में खूब प्रचार किया।

इस घटना के चार दिन पहले 25-26 जुलाई को अहमदाबाद में परमाणु ऊर्जा पर एक सम्मेलन में देशभर के वैज्ञानिक परमाणु ऊर्जा विरोधी कार्यकर्ता और आंदोलन के प्रतिनिधि इकट्ठे हुए थे। वहां परमाणु ऊर्जा पर जन घोषणा-पत्र जारी किया गया था। इसमें देश के परमाणु बिजली परियोजनाओं पर तत्काल रोक लगाने की मांग की गयी थी और इसके बारे में कई सवाल खड़े किये गये थे।

बरगी बांध विस्थापित संघ ने चुटका जन सुनवाई को रद्द किये जाने को जनता की जीत बताया है और कहा है कि इससे उन सारे जन-संघर्षों को ताकत मिलेगी जो विनाशकारी परियोजनाओं के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। ❑

आवश्यक सूचना

'सर्वोदय जगत'

के सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों, लेखकों व शुभ-चिन्तकों को सूचित करना है कि सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की वेबसाइट

www.ssprakashan.com

पर 'सर्वोदय जगत' का प्रत्येक अंक उपलब्ध कराया जा रहा है। कृपया वेबसाइट देखें। –सं.

शख्सियत

नरों में इंद्र नरेंद्र

❑ सगन (डॉ. सुगन बरंठ)

चाहे शारीरिक हमला, चाहे लिखित विरोध हो, चाहे गंदी से गंदी जबान में कोई बात करे तब भी जो इनसान अपना मानसिक, शारीरिक संतुलन न खोये उसे हम क्या कह सकते हैं? गीता में ऐसे व्यक्ति को स्थित प्रज्ञ कहा है।

डॉ. नरेंद्र दाभोलकर पर शारीरिक हमले हुए। उन्हें मार-पीटकर कपड़े फाड़ दिये गये। गाली-गलौज तो कइ बार हुई। मुंह पर कालिख पोती गयी। उनकी सभा भंग कर दी गयी, उनके नाम से मीडिया पर बुरा कहा गया। ऐसा करनेवालों के खिलाफ न पुलिस में एफ. आर् आय़ दाखिल की न शारीरिक या शाब्दिक हमला किया। यहां तक कि मित्रों में भी ऐसी घटना का उल्लेख तक नहीं किया।

अहिंसा का ऐसा जीता जागता उदाहरण उम्र के छः दशक पार करने पर मुझे कहीं दिखाई नहीं दिया।

सर्वोदय दर्शन के एकादश व्रतों में जब कुछ जोड़ा जाने लगा तब विनोबा ने कहा, इसमें कुछ भी जोड़ना है तो केवल इतना की ''अनिंदा व्रत निश्चये ये एकादश सेव्य हैं।'' अनिंदा व्रत का साक्षात स्वरूप क्या हो वह थे डॉ. नरेंद्र दाभोलकर।

उन्होंने दृढ़तापूर्वक अपनी बात रखने, लिखने का अधिकार किसी भी स्थिति में छोड़ा नहीं।

उनके काम के बारे में थोड़े में लिखूंगा, क्योंकि वह खुशबू में महाराष्ट्र के गांव-गांव में फैली हुई है। उनके व्यक्तित्व के बारे में थोड़ी गहराई में लिख रहा हूं कि उनके पास जो कुछ था उन्हें जन्म जातप्राप्त था। कुछ उन्होंने अभ्यास से प्राप्त किया था। गुजराती में एक ख्यातनाम लेखक ठाकुर थे, जो गांधीजी के वर्ग-मित्र थे। जब गांधी विलायत जाने वाले थे तब अपनी विदाई कार्यक्रम में गांधी मुश्किल से 2-3 वाक्य बोल पाये। ठाकुरजी ने उस दिन अपनी डायरी में लिखा कि ऐसा अति सामान्य या डरपोक आदमी विलायत जाकर क्या करेगा। उन्हीं बलवंतराय ठाकुर ने बाद में गांधीजी के बारे में लिखा कि आज की अद्भुत प्रतिभा उन्होंने अभ्यास से कमाई है। व्यक्ति में जन्मजात बीज हो और उसे ठीक खुराक मिल जाय तो वह कैसे फलता-फूलता है इसे गांधी की तरह नरेंद्र में देखा जा सकता है।

सामाजिक कृतज्ञता निधि जैसी अद्भुत कल्पना को जीवंत जामा पहनाना, उसके माध्यम से स्टेज एवं फिल्मों के कलाकारों को जोड़कर सामान्य जनों से निधि खड़ा करना यह तो साक्षात 'सर्वोदय-पात्र' की विनोबा की कल्पना के शत प्रतिशत जैसा था। विदेशों में रहे भारतीयों के संवेदनशील मन की थाह पकड़कर उसके माध्यम से जीवनदानी कार्यकर्ताओं को पुरस्कृत करना, अनेकों शिष्य वृत्तियां दिलवाना, अनेक सामाजिक कामों में मदद करवाना इसे डॉ. दाभोलकर महाराष्ट्र फाउंडेशन द्वारा करते रहे। सही कसौटी पर दाता का भी बौद्धिक परिवर्तन करना, यह दान नहीं जिम्मेदारी है, ऐसा समझाना डॉ. दाभोलकर का कोई सानी नहीं। यह बात हम गांधी, विनोबा, जयप्रकाश, जैसों में देखी है।

''साधना'' साप्ताहिक में अनेकों नये एवं कुशल लेखक, अनुवादक, कलाकार, चित्रकार यहां तक कि वितरक भी उन्होंने जिस तरह जोड़े वह शब्दों के परे है।

उनका अंधश्रद्धा विरोधी अभियान तो सर्वविदित है। अंधश्रद्धा विरोधी अभियान की मासिक पत्रिका भी उन्होंने इसी दृष्टि से प्रकाशित की। संगठन के अनुभव से उन्होंने जो छोटी-छोटी बातें जोड़कर पुस्तिका तैयार की वह हर संगठन के लिए आचरणीय है।

इन कामों में जो आत्मिक गुण है यह वास्तव में समाज के प्रति करुणा से पैदा हुई ऊर्जा है। नरेंद्र तो लोभ, भोग से इतना दूर कि मैं सोच तक नहीं सकता। इतनी सार्वजनिक संपत्ति का संग्रह फिर भी कभी संस्था या स्वयं की कार से दौरे पर चला हो, याद नहीं। हमेशा सार्वजनिक वाहन का ही उपयोग और समय के बड़े ही पाबंद।

मेरा अनुभव कि जो इनसान समय का नियोजन नहीं कर सकता वही अधिकाधिक तंत्रज्ञान का आदी होता है। डॉक्टर नरेंद्र का पूरे साल का एक-एक घंटे का नियोजन सालभर पहले ही तैयार रहता था। इस संदर्भ में भी वह राष्ट्रपिता के आस पास थे। अस्वाद व्रत के धनी डॉक्टर साहब शरीर को भी विश्वस्त की तरह उपयोग में लाते रहे,जिसे गांधी— गोखले के संवाद में पढ़ सकते हैं। उनका नियमित घूमने-जाना ही हत्यारे ने उसका लाभ उठाया। उन्हें गांधीवादी कहा जा रहा है जो उनके आचरण की वास्तविकता रही है।

ये सारे लक्षण गांधी के स्वराज शब्द में आते हैं। स्व पर राज वही सच्चा स्वराज। यह वही कर सकता है जो खुद की इंद्रियों का गुलाम न हो। स्थित प्रज्ञ की व्याख्या में यह बात सब से पहले आती है। जो स्वयं का गुलाम नहीं उसे दुनिया की कोई ताकत गुलाम नहीं बना सकती।

वैसे भी दुनिया में जैसा नाम वैसा लोग दुर्लभ होते हैं। डॉक्टर नरेंद्र वास्तव में नरों में इंद्र अर्थात् श्रेष्ठ मानव थे।

(डॉ. दाभोलकर ने जितने पत्र मुझे लिखे उनमें मेरा उल्लेख सगन ही करते थे।)

❑

मंत्री का स्पष्टीकरण

हम आपका ध्यान 1 अगस्त, 2013 को वाराणसी के अखबारों में प्रकाशित समाचार की ओर आकृष्ट करना चाहेंगे, जिसमें यह लिखा गया है ''सर्व सेवा संघ के रामधीरज'। यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि श्री रामधीरज अन्ना के आंदोलन में व्यक्तिगत रूप से शामिल हैं न कि सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि के रूप में।

सर्व सेवा संघ ने अन्ना के आंदोलन के लिए कभी भी किसी को प्रतिनिधि नहीं नियुक्त किया है और न ही संघ इस आंदोलन का हिस्सा है।

हम यह भी स्पष्ट करना चाहेंगे कि वाराणसी में अन्ना की 'जनतंत्र यात्रा' के कार्यक्रम के लिए लेटर पैड पर कैम्प कार्यालय का पता सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी छपा है, उसकी कोई जानकारी सर्व सेवा संघ के पास नहीं है। न ही इसके लिए सर्व सेवा संघ से कभी अनुमति मांगी गयी थी। सर्व सेवा संघ को इस पूरे प्रकरण से कोई लेना-देना नहीं है। संघ का नाम इस तरह इस्तेमाल करना आपत्तिजनक है। हम इसका खण्डन करते हैं।

–चंदन पाल,
मंत्री, सर्व सेवा संघ

सर्वोदय समाज सम्मेलन

अगला सर्वोदय समाज सम्मेलन 23 से 25 अक्टूबर, 2013 तक आगरा (उत्तर प्रदेश) में सम्पन्न होगा। सम्मेलन में भाग लेने वाले सर्वोदय प्रेमियों, प्रतिनिधियों के लिए निवास की व्यवस्था 22 अक्टूबर की शाम से 25 अक्टूबर की रात तक ही रहेगी।

सम्मेलन में शरीक होने वाले भाई-बहनों से निवेदन है कि अपना आने का कार्यक्रम इसी अनुसार बनायें।

सम्मेलन के लिए रेलवे कन्सेशन फार्म 10 रुपये प्रति फार्म भेजकर सर्व सेवा संघ कार्यालय, सेवाग्राम, वर्धा (महाराष्ट्र) एवं वाराणसी (उत्तर प्रदेश) से मँगा सकते हैं।

–मारोती गावंडे

शीतल पेय : कितना ठण्डा, कितना गरम

अमेरिका में हुए एक अध्ययन के मुताबिक ज्यादा शीतल पेय पीने वाले बच्चों का व्यवहार ज्यादा आक्रामक होने की आशंका होती है। पांच साल की उम्र के बच्चों के अध्ययन में पाया गया कि अधिक शीतल पेय पीने वाले बच्चों में अपनी या दूसरों की चीजें तोड़ने या झगड़ा करने की आशंका बढ़ जाती है। बच्चा जितना ज्यादा शीतल पेय पीता है, उसकी व्यवहारगत समस्याएं ज्यादा होने लगती हैं। उसकी एकाग्रता में कमी और लोगों से कट कर अलग-थलग रहने की समस्याएं देखने में आयी हैं।

पेप्सी-कोला तथा अन्य ब्रांडेड शीतल पेयों के तथ्यात्मक विश्लेषण के जनक डॉ. बनवारीलाल शर्मा ने अपनी जिन्दगी ही इसके लिए लगा दी। समूह चर्चा में 'लिटमस टेस्ट' करके तथा रसोईघर या टायलट को कोकाकोला आदि से धोकर उसकी एसिडिटी (तेजाब) का साक्षात आभास कराते थे। केरल का कलमक्कम और बलिया का सिंहाचवर प्लांट पहले ही बन्द हो चुके हैं।

सुधी पाठक अपने बच्चों के सुन्दर स्वास्थ्य एवं मंगलमय भविष्य के लिए हानिकारक शीतल पेयों का परित्याग करेंगे और निश्चय करेंगे कि 'दूध-दही के देश में पेप्सी कोला नहीं चलेगा।'

–डॉ. हैदर अली खाँ

दोस्ती का अमृत ज्यादा मीठा

कलकत्ता के हिन्दुओं और मुसलमानों को पक्के दोस्तों की तरह यहां एक साथ इकट्ठा देखकर मैं उनको मुबारकवाद देता हूं। हिन्दुओं और मुसलमानों की खुशी के नारे एक ही हैं। उन्होंने बिना किसी हिचकिचाहट के तिरंगा झण्डा फहराया इससे भी बड़ी बात यह हुई कि हिन्दू मसजिदों में ले जाये गये और मुसलमान भाई मंदिरों में। यह खबर मुझे खिलाफत के दिनों की याद दिलाती है, जब हिन्दू और मुसलमान आपस में भाई-भाई की तरह रहते थे। आज जो कुछ मैं देख रहा हूं। अगर वह दिल से निकली हुई चीज है और चन्द मिनटों का आवेश नहीं है, तो यह खिलाफत के दिनों से भी ज्यादा अच्छी बात है। इसकी वजह यही है कि दोनों फिरके आपसी दंगे का जहर पी चुके हैं। इसलिए दोस्ती का अमृत अब पहले से ज्यादा मीठा लगना चाहिए। मुझे उम्मीद है कि कलकत्ता और हावड़ा हमेशा के फिरकेवाराना दंगे के छूत के रोग के जहर से पूरी तरह बरी हो जायेंगे। तब सचमुच आपको पूर्वी बंगाल और बचे हुए हिन्दुस्तान के बारे में डरने की कोई जरूरत नहीं रहेगी। मैं उम्मीद करता हूं और मुझे पूरा भरोसा है कि कलकत्ता के हिन्दू-मुसलमानों का भाईचारा सच्चा है, तो उसका असर पंजाब और हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों पर जरूर पड़ेगा।

–महात्मा गांधी

(बेलियाघाट, राशबगान मैदान, कलकत्ता 15 अगस्त, 1947)

काम की रपट

असम शांति-यात्रा

जुलाई, 2013 के मध्य में असम के बोडो क्षेत्र में हुई हिंसक घटनाओं के बाद वहां शांति-स्थापना हेतु गांधीजनों ने काफी प्रयास किये। इसकी एक महत्त्वपूर्ण कड़ी एक गांधीय दल द्वारा कोकराझार एवं चिरांग जिले की शांति-यात्रा और असम के राज्यपाल श्री जे. बी. पटनायक से मुलाकात रही। अगस्त के प्रथम सप्ताह में आयोजित इस कार्यक्रम का नेतृत्व सुश्री राधा भट्ट, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ व गांधी शांति प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली ने किया।

शांति-यात्रा के दौरान असम की स्थिति विकट एवं तनावपूर्ण थी। वहां चार लाख से अधिक लोग विस्थापित होकर शिविरों में रह रहे थे। सौ से अधिक लोग मारे गये थे, जिनमें से ज्यादातर मुस्लिम एवं वोडो समुदाय से थे। इसके अलावा हजारों घरों को जला दिया गया था, जिनमें करीब 12 हजार कोकराझार जिले से संबंधित थे।

उक्त आशय की जानकारी 'सर्व सेवा संघ' की कोटा कार्यसमिति एवं अधिवेशन में दी गयी थी। इसके बाद प्रभावित क्षेत्रों में शांति-सद्भाव हेतु कार्य करने का निर्णय लिया गया। साथ ही इसकी जिम्मेदारी श्री चंदनपाल, मंत्री, सर्व सेवा संघ एवं मंत्री, गांधी शांति प्रतिष्ठान, पश्चिम बंगाल को दी गयी।

इस हेतु शुरू में प्रभावित क्षेत्र के त्वरित अध्ययन हेतु 10 दिनों का एक कार्यक्रम बनाया गया। इसमें 3 दिनों का शिक्षण शिविर 'शांति साधना आश्रम, गुवाहाटी' में हुआ। सर्व सेवा संघ, गांधी शांति प्रतिष्ठान, शांति साधना आश्रम, कस्तूरबा नेशनल मेमोरियल ट्रस्ट, असम ब्रांच, गुजरात विद्यापीठ, आशा दर्शन, राष्ट्रीय युवा संगठन और विभिन्न राज्यों के सर्वोदय मंडल के प्रतिनिधियों ने शांति-यात्रा में भाग लिया।

सर्व सेवा संघ सितंबर, 2012 से अन्य संगठनों के साथ मिलकर बी.टी.ए.डी. में शांति-कार्य कर रहा है। अनेक व्यक्ति, संगठन एवं सरकारी विभाग ने प्रभावित लोगों के बीच राहत एवं पुनर्वास का कार्य किया और स्वास्थ्य शिविर भी लगाया। साथ ही सर्व सेवा संघ ने पूरे क्षेत्र में शांति-सद्भाव हेतु जन-संपर्क अभियान चलाया।

इस कार्य में शांति यात्री (सैनिक), शिक्षाविद्, लेखक, पत्रकार, किसान, मजदूर, शिक्षक, छात्र एवं समाज के विभिन्न तबके के लोगों ने शिरकत की। इन लोगों ने बोडो, मुस्लिम, रागवंशी, नेपाली, बंगाली, बिहारी, मारवाड़ी, आदिवासी, संथाल, नागा, जयंतिया, मिजो, खासी, गारो इत्यादि समुदायों के लोगों से मुलाकात की। इस तरह विभिन्न लोगों से संवाद कर वस्तुस्थिति को समझने एवं समझाने की कोशिश की गयी। साथ ही असम के राज्यपाल जे.बी. पटनायक, मुख्यमंत्री श्री तरुण गोगई एवं बी.टी.ए.डी. के प्रमुख श्री हग्रामा मोहिलारी सहित कई पूर्व मंत्रियों, सांसदों, विधायकों, पार्सदों इत्यादि से भी मुलाकात की गयी।

शांति-यात्रा दल के सदस्यों की जो समझ बनी, वह निम्न है :

1. असम खासकर बी.टी.ए.डी. की समस्या काफी जटिल है।
2. असम में विभिन्न समुदायों के बीच परस्पर एकता एवं साथ-साथ रहने की सुंदर परम्परा रही है। बोडो क्षेत्र की नवीनतम घटना कि कुछ दशकों में हुई अनेक हिंसक घटनाओं एवं दंगों के कारण यह परम्परा कुप्रभावित हुई है।
3. असम में अनेक समुदायों के लोग रहते हैं, जिनमें बोडो और मुस्लिम प्रमुख हैं। बोडो लोगों को ऐसा लगता है कि यदि मौजूदा स्थिति कायम रही तो वे लोग अल्पसंख्यक हो जायेंगे। उन्हें जमीन-रोजगार आदि प्राप्त करने में समस्या होगी और वे अपनी पहचान खो देंगे।
4. असम में स्थिति बदल रही है। लेकिन वहां जारी आर्थिक बहिष्कार न केवल मुस्लिमों वरन् बोडो सहित सभी समुदायों के लिए खतरनाक एवं नुकसानदेह है।
5. अलगाववादी समूहों के साथ-साथ धार्मिक कट्टरतावादी एवं कुछ स्वार्थी राजनैतिक समूहों द्वारा भी लोगों के बीच वैमनस्य फैलाने का प्रयास किया जा रहा है।
6. वहां भूमि-रिकार्ड को लेकर जटिलताएं हैं।
7. वहां ऐसे संगठनों की कमी है, जो पीड़ितों को कानूनी लड़ाई में मदद करें और उन्हें न्याय दिलाने हेतु संघर्ष एवं सहयोग करें।

उक्त सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए शांति-यात्रा दल ने निम्न पहल की :

1. निष्पक्षभाव से सभी पक्षों से संपर्क विकसित किया गया।
2. विभिन्न समुदायों के विरोधी पक्षों के बीच एक-दूसरे के सकारात्मक विचारों और कामों की प्रस्तुति।
3. विभिन्न समुदायों के समक्ष उनके बीच सहमति के बिन्दुओं को रखा गया, उनका इस कार्य में सहयोग लिया गया, ताकि वे और करीब आयें।
4. बोडो क्षेत्र (बी.टी.ए.डी.) में गांव बुढ़ा प्रणाली है, जिसका प्रभाव क्षेत्र के सभी समुदायों पर है। उनका इस कार्य में सहयोग लिया गया।
5. कोकराझार एवं चिरांग जिले में विभिन्न समूहों के नेताओं तथा आमजनों से मुलाकात की और कई शांति बैठकें आयोजित कीं।
6. प्रशासन से अनुरोध किया गया कि सुरक्षा के नाम पर आम जनजीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करे। शांति-दल को कोई सुरक्षा मुहैया न कराये।
7. चूंकि प्रशासन ने शांतिदल की भूमिका को स्पष्ट रूप से समझ लिया था। उन्होंने ने भी शांति दल से सहयोग किया।
8. अहिंसा, प्रेम, भाईचारा एवं शांति का संदेश फैलाने और साझी-संस्कृति के विकास हेतु विभिन्न समूहों को लेकर 20-24 फरवरी, 2013 को गांव बुढ़ा, कोकराझार में एक युवा शिविर आयोजित किया गया।
9. इस शिविर के दौरान शिविरार्थियों ने पूर्व जौलियापाड़ा तथा खारगांव में सड़क का निर्माण किया, जिसमें गांव के विभिन्न समुदायों के लोगों का सहयोग मिला।
10. शिविरार्थियों ने पदयात्रा की तथा कोकराझार के रास मैदान में एक दिन का ध्यानाकर्षण उपवास रखा। इसमें बोडो और मुस्लिम दोनों समुदायों की भागीदारी रही और गांव बुढ़ा ने भी इसमें शिरकत की। यह उपवास आत्मशुद्धि एवं आत्मनिरीक्षण हेतु था, किसी के विरोध में नहीं।

–चंदन पाल

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) अशोक भारत (प्रकाशक), सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित तथा सर्व सेवा संघ-परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001, फोन एवं फैक्स नं. 0542-2440385 से प्रकाशित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1600